अविनाशी अविकार परम रस धाम हैं।
समाधान सर्वज्ञ सहज अभिराम हैं॥
शुद्ध बुद्ध अविरुद्ध अनादि अनंत हैं।
जगत शिरोमणि सिद्ध सदा जयवंत हैं॥१॥

× × × × ×

स्वस्वरूपस्थितान् शुद्धान्, प्राप्ताष्टगुणसंपदः।
नष्टाष्टकर्मसंदोहान्, सिद्धान् वन्दे पुनः पुनः॥

मूल्य ०—[illegible]

वीर संवत २४९०

प्रथमावृत्ति २०००

विक्रम संवत् २०२१

मुद्रक – श्री जैन प्रिंटिंग प्रेस सैलाना (म. प्र.)

सिद्ध—स्तुति

और

नन्दी स्तुति आदि

संग्राहक :—

रतनलाल डोशी

द्रव्यसहायक:—

श्रीमान् सेठ किमनलालजी पृथ्वीराजजी मालु

खींचन (मारवाड़)

—: निवेदन :—

धर्म साधना, देव की आराधना से प्रारम्भ होती है। देव पर श्रद्धा होना पहली शर्त है। अरिहंत देव पर श्रद्धा जमना जितना सरल है, उतना सिद्ध भगवान पर नहीं है। अरिहंत भगवान् पुरुषाकार युक्त होते हैं। पुरुष में रहा हुआ परम वीतरागता एवं ज्ञान प्रकाश से प्रकाशमान आत्मा का चिन्तन उतना कठिन नहीं, जितना शरीर रहित-निराकार आत्मा का स्वरूप चिन्तन है। परम पारिणामिकभाव युक्त आत्मा के स्वरूप का विचार और वैसे ही निर्दोष अपने सत्तागत आत्म-स्वरूप की तुलना आदि का चिंतन तो अभ्यास से हो हो सकता है। बहुत कम व्यक्ति निराकार सिद्ध परमात्मा का चिंतन करते हैं। समाज में जितनी स्तुतियाँ स्तवन एवं स्तोत्र, अरिहंत भगवान् के हैं, उतने सिद्ध भगवान के नहीं हैं। फिर भी सिद्ध भगवान का स्मरण वंदन और कीर्तन होना है। ऐसे सिद्ध भगवान् की भक्ति के रसिकों के लिए यह सिद्ध स्तुति प्रकाश में आरही है।

स्तुति स्तोत्र और प्रार्थनाओं से विशेष लाभ तभी हो सकता है जब कि उनके भावों को समझा जाय और एकाग्रता पूर्वक उन गुणों-विशेषताओं को ध्यान में लेते हुए स्तुति की जाय। इधर उधर भटकते हुए मन को खिंचकर आराध्य के स्वरूप चिंतन अथवा स्तुति में वर्णित भावों में लगाने से आत्मा में रहे हुए उन गुणों को बल मिलता है आत्मा पर के अशुभ आवरण उतने अंशों में हटते हैं और आत्मा की विशुद्ध पर्यायें खुलने

लगती है। साधना, प्रयत्न साध्य होती है। अभ्यास बढ़ाने से सफलता की ओर गति होती है। यदि स्वाध्याय प्रेमियों ने इस ओर ध्यान दिया, तो उन्हें आनन्द की अनुभूति होगी।

इसमें सर्व प्रथम आगम के आधार से सिद्ध भगवान् का स्वरूप बताया गया है। इसके बाद पृ ९ से आगमोक्त सिद्ध स्तुति प्रारम्भ की गई है। प्रारम्भ से गाथा २२ तक उववाई और प्रज्ञापना सूत्र से ली गई है और शेष गाथाएँ विविध ग्रंथों से लीगई है। इसके बाद पृ २० से लगाकर पृ ३६ तक प्राकृत भाषा की ८३ गाथाओं की वह स्तुति दी गई है, जिसमें "बड़ी साधु वन्दना" की तरह सिद्धगति प्राप्त सभी परमात्माओं का स्मरण कर नमस्कार किया गया है—जिनका उल्लेख आगमों में हुआ है, और जिसका चौथा चरण "नमो अनंत सिद्धाणं" है। इस सिद्धस्तुति का पाठ पूज्य श्री नानचन्द्रजी म की सम्प्रदाय के स्वर्गीय तपस्वीराज श्री सिरेमलजी महाराज, रोज करते थे और अब तपस्वीश्री चम्पालालजी म आदि सन्त करते रहते हैं। यहा तक सभी प्राकृत स्तुतियां अर्थ सहित दी गई है। इसके बाद "परमानन्द स्तोत्र," फिर हिन्दी स्तुतियाँ और एक गुजर भाषामय सिद्ध स्थान वर्णन साध्य देकर सिद्धस्तुति पृ ४२ में पूर्ण की गई। इसके बाद पृ ४३ से नन्दीसूत्र के प्रारम्भ में आई हुई स्तुतियाँ और स्थविरावली भी दे दी गई है। हमारी योजना इतनी ही सामग्री देने की थी। किंतु धर्मरसिक श्रीमान सेठ किसनलालजी साहब मालू सोजन निवासी के आग्रह से भक्तामर, कल्याण मन्दिर, [illegible]

स्व. पूज्यश्री रत्नचन्द्रजी म. सा. का गुणाष्टक तथा मान्य चारित्रात्मा बहुश्रुत पं. मुनिराज श्रीसमर्थमलजी म. सा. के तीन गुणाष्टक दिये गये हैं। इस प्रकार इसकी सामग्री में वृद्धि हुई है।

इसकी एक हजार प्रतियों के प्रकाशन का व्यय श्रीमान् सेठ किशनलालजी पृथ्वीराजजी मालू ने प्रदान किया है। यह प्रकाशन स्वाध्याय प्रेमियों के लिए उपयोगी सिद्ध होगा।

विनीत –

मानकमाल पारवाल–अध्यक्ष

धर्मपूर्णिमा २०२१ रतनलाल डोसी–प्रधानमन्त्री

बाबूलाल सराफ–मन्त्री

जसवन्तमाल शाह–मन्त्री

सिद्ध-स्तुति

—•••—

सिद्ध का स्वरूप

ते णं तत्थ सिद्धा हवंति—सादीया अपज्जवसिया असरीरा जीवघणा दंसणनाणोवउत्ता निट्ठियट्ठा निरे-यणा नीरया णिम्मला वितिमिरा विसुद्धा सासय-मणागयद्धं कालं चिट्ठंति।

वहां (=लोकाग्रपर) वे सिद्ध होते हैं। आदि सहित, अन्त रहित शरीर रहित ज्ञान और दर्शन रूप (साकार और अनाकार) उपयोग से युक्त, सब प्रयोजनों से निवृत्त, कम्पन से रहित=निश्चल, बध्यमान (=रजरूप आते हुए) कर्मों से रहित, *पूर्वबद्ध कर्मों से मुक्त अज्ञान से रहित और विशुद्ध (=अमिश्रित* शुद्ध जीव स्वरूपवाले) होकर अनागत सदाकाल भविष्य काल में शाश्वत (=अविनश्वर) रहते हैं।

से केणट्ठेण भंते! एवं वुच्चइ–ते णं तत्थ सिद्धा भवंति सादीया अपज्जवसिया जाव चिट्ठंति?–गोयमा! से जहाणामए बीयाणं अग्गिदड्ढाणं पुणरवि अंकुरुप्पत्ती ण भवइ। एवामेव सिद्धाण, कम्मबीए दड्ढे पुणरवि जम्मुप्पत्ती न भवइ। से तेणट्ठेण गोयमा! एवं वुच्चइ–ते णं तत्थ सिद्धा भवंति सादीया अपज्जवसिया जाव चिट्ठंति।

भन्ते! किस आशय से इस प्रकार कहते हैं कि वहाँ वे सिद्ध होते हैं, सादि अन्त रहित यावत् शाश्वत रहते हैं?

गौतम! जैसे अग्नि से जले हुए बीजों की पुनः अंकुर रूप उत्पत्ति नहीं होती है। उसी प्रकार कर्म बीजों के जल जाने पर सिद्धों की भी पुनः जन्मरूप उत्पत्ति नहीं होती है। इसलिए गौतम! मैं इस प्रकार कहता हूँ कि–'वे वहाँ सिद्ध होते हैं यावत् अनागत काल में शाश्वत रहते हैं।'

जीवा णं भंते! सिज्झमाणा कयरम्मि संघयणे सिज्झंति? गोयमा! वइरोसभणारायसंघयणे सिज्झंति।

भन्ते! सिद्धयमान (=सिद्ध होने वाला) जीव कौनसे संहनन (=हड्डियों के बंधन) में सिद्ध होते हैं?

–गौतम! वज्रऋषभनाराच संहनन (=कीलिका और पट्टी सहित मर्कट बंधमय संधियों वाला हड्डियों का बंधन) में सिद्ध होते हैं।

जीवा ण भंते ! सिज्झमाणा कयरम्मि संठाणे सिज्झंति ?–गोयमा ! छण्हं संठाणाणं अण्णयरे संठाणे सिज्झंती ।

भन्ते ! सिद्धयमान जीव कौन-से प्रकार में सिद्ध होते हैं ?

–गौतम ! छह संस्थान (=आकार) में से किसी भी संस्थान में सिद्ध होते हैं ।

जीवा ण भंते ! सिज्झमाणा कयरम्मि उच्चत्ते सिज्झंति ?–गोयमा ! जहण्णेणं सत्तरयणीओ, उक्कोसेण पंचधणुस्सए सिज्झंति ।

भन्ते ! सिद्धयमान जीव कितनी ऊँचाई में सिद्ध होते हैं ?

–गौतम ! जघन्य सात हाथ और उत्कृष्ट पांच सौ धनुष की ऊँचाई में सिद्ध होते हैं ।

जीवा ण भंते ! सिज्झमाणा कयरम्मि आउए सिज्झंति ?–गोयमा ! जहण्णेणं साइरेगट्ठवासाउए, उक्कोसेणं पुव्वकोडियाउए सिज्झंति ।

भन्ते ! सिद्धयमान जीव कितने आयुष्य में सिद्ध होते हैं ?

–गौतम ! जघन्य आठ वर्ष से अधिक आयुष्य में और उत्कृष्ट कोटिपूर्व की आयुष्य में सिद्ध होते हैं । अर्थात् आठ

वष से ऊपर की प्रायुष्य मे लगाकर प्राडपूर्व तक की प्रायुष्य तक सिद्ध हो सकते हैं। इससे कम ज्यादा आयुष्यवाले मनुष्य सिद्ध नहीं हो सकते हैं।

सिद्धों का निवास स्थान

प्रत्थि ण भते ! इमीसे रयणप्पहाए पुढवीए अहे सिद्धा परिवसति ?—णो इणट्ठे समट्ठे। एव जाव अहेसत्तमाए।

भते ! क्या इस रत्नप्रभा पृथ्वी के नीचे सिद्ध निवास करते हैं ?—नही, यह प्राशय ठीक नहीं है। इसी प्रकार सातों पृथ्विया के विषय मे समझना चाहिए।

प्रत्थि ण भते ! सोहमस्स कप्पस्स अहे सिद्धा परिवसति ?—णो इणट्ठे समट्ठे। एव सव्वेसि पुच्छा—ईसाणस्स सणकुमारस्स जाव अच्चुयस्स गेविज्ज-विमाणाण अणुत्तर विमाणाण।

भते ! क्या सिद्ध, सौधमकल्प के नीचे निवास करते हैं ?—यह प्राशय ठीक नही है।

इसी प्रकार ईशान सनत्कुमार अच्युत, ग्रैवेयक-विमान और अनुत्तरविमान—सबकी पृच्छा समझना चाहिए।

प्रत्थि ण भते ! ईसीपब्भाराए पुढवीए अहे सिद्धा परिवसति ?—णो इणट्ठे समट्ठे।

तो क्या भन्ते ! सिद्ध, ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी के नीचे निवास करते हैं ? यह आशय ठीक नहीं है।

से कहिं खाइ ण भंते ! सिद्धापरिवसंति ? गोयमा ! इमीसे रयणप्पहाए पुढवीए बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ उड्ढं चंदिमसूरियगहगणणक्खत्ततारागभवणाओ बहूइं जोयणाइं बहूइं जोयणसयाइं, बहूइं जोयणसहस्साइं बहूओ जोयणकोडिओ, बहूओ जोयणकोडाकोडीओ उड्ढतर उप्पइत्ता सोहम्मीसाणसणकुमारमाहिंदबंभलंतग-महासुक्कसहस्सारआणयपाणयआरणच्चुय तिण्णि य अट्ठारे गेविज्जविमाणावाससए वीइवइत्ता, विजय-वेजयंतजयंतअपराजियसव्वट्ठसिद्धस्स य महाविमाणस्स सव्व उपरिल्लाओ थूमियग्गाओ दुवालसजोयणाइं अबाहाए एत्थ ण ईसीपब्भारा णाम पुढवी पण्णत्ता।

भंते ! फिर सिद्ध कहां रहते हैं ?

गौतम ! इस रत्नप्रभा पृथ्वी के बहुसम रमणीय भूमि भाग से ऊपर चन्द्र सूर्य, ग्रहगण नक्षत्र और तारागों के भवनों से, बहुत-से योजन, बहुत-से सैकड़ों योजनों बहुत-से हजार योजनों बहुत से सौ-हजार योजनों, बहुत-से क्रोड योजनों, और बहुत से क्रोडाक्रोड योजनों से ऊर्ध्वतर जानेपर सौधर्म, ईशान सनत्कुमार माहेन्द्र, ब्रह्म, लांतक, महाशुक्र, सहस्रार, आणत, प्राणत, आरण और अच्युतकल्प, ३१८ ग्रैवेयक विमान

आवास को पार कर, विजय, वजयन्त, जयन्त, अपराजित और सर्वार्थसिद्ध महाविमान के शिखर के अग्रभाग से बारह योजन के अन्तर (= अबाहा) से इस स्थान पर ईषत्प्राग्भारा नाम की पृथ्वी है।

पणयालीस जोयणसयसहस्साइ आयामविक्खभेण, एगा जोयणकोडी, बायालीस सयसहस्साइ, तीस च सहस्साइ, दोण्णि य अउणापण्णे जोणयसए, किंचि विसेसाहिए परिरएण ।

वह पृथ्वी पतालीस लाख योजन की लम्बी चौडी है और एक कराड बयालीस लाख तीस हजार, दो सौ गुणपचास योजन स कुछ अधिक उसकी परिधि है।

ईसीपब्भारा य ण पुढवीए बहुमज्झदेसभाए अट्ठ-जोयणिए खेत्ते,अट्ठजोयणाइ बाहल्लेण। तयाऽणतर मायाए मायाए पडिहायमाणी पडिहायमाणी सव्वेसु चरिमपेरतेसु मच्छियपत्ताओ तणुयतरा, अगुलस्स असखेज्जइभाग बाहल्लेण पण्णत्ता ।

वह ईषत्प्रागभारा पृथ्वी बहुमध्य देशभाग में, आठ योजन जितने क्षेत्र मे, आठ योजन मोटी है। इसके बाद थोडी थोडी कम होती हुई, सबसे अन्तिम छोरो पर मक्खी की पाँख से भी पतला है। उस छोर की मोटाई अगुल के असख्येय भाग जितनी है।

ईसीपब्भाराए णं पुढवीए दुवालस णामधेज्जा पण्णत्ता । तं जहा–ईसी इ वा, ईसीपब्भारा इ वा, तणू इ वा, तणुतणू इ वा, सिद्धी इ वा, सिद्धालए इ वा, मुत्ती इ वा,मुत्तालए इ वा,लोयग्गे इ वा,लोयग्गथूभिया इ वा, लोयग्गपडिवुज्झणा इ वा, सव्वपाणभूयजीव-सत्तसुहावहा इ वा ।

ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी के बारह नाम हैं । जैसे–१ ईषत (=अल्प हलकी या छोटी),२ ईषतप्राग्भारा(=अल्प बड़ा), ३ तनु (=पतली), ४ तनुतनु (=विशेष पतली), ५ सिद्धि, ६ सिद्धालय(=सिद्धों का घर), ७ मुक्ति, ८ मुक्तालय, ९ लोकाग्र, १० लोकाग्रस्तूपिका (=लोकाग्र का शिखर), ११ लोकाग्रप्रति-बोधना (=जिसके द्वारा लोकाग्र जाना जाता हो ऐसी) और १२ सब प्राण, भूत, जीव और सत्त्वों को सुखावह ।

ईसीपब्भारा णं पुढवी सेया आयंस तलविमल-सोल्लियमुणालदगरयतुसारगोक्खीरहारवण्णा उत्ताणय-छत्तसंठाणसंठिया सव्वज्जुणसुवण्णमई अच्छा सण्हा लण्हा घट्ठा मट्ठा णीयरा णिम्मला णिप्पंका णिक्कंकडच्छाया समरीचिया सुप्पभा पासादीया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा ।

ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी, दर्पण के तल-सी विमल सोल्लिय (=एक प्रकार का फूल संभवतः मुचकुंद), कमलनाल(=मृणाल

=मणाल), जलकण, तुषार गाय के दूध और हार के समान वर्णवाली-श्वेत है। उलट छत्र के आकार के समान आकार में रहा हुइ है और अर्जुनस्वर्ण-(= सफेद सोना) मयी है। वह आकाश या स्फटिक-सा स्वच्छ कामल परमाणुओं के स्कंध से निष्पन्न, घुण्टित (= घोंटकर चिकनी की हुई-सी), वस्तु के समान तज शान-से घिसी हुई सी, सुकुमार शान से सँवारी हुई-सी या प्रमाजनिका से साफी हुई सी रज से रहित मल से रहित, आद्रमल से रहित, आतङ्क अनावरण, छाया या अक-ट्ट शोभावाली, किरणो से युक्त सुंदर प्रभावाली, मन के प्रिय प्रमादकारक (= प्रासादीय), दर्शनीय (= जिसे देखते हुए नयन अघाते न हो ऐसी), अभिरूप (=कमनीय) और प्रतिरूप (=देखने के बाद जिसका दृश्य आखो के सामने घूमता ही रहे ऐसी) है।

ईसीपब्भाराए ण पुढवीए सीयाए जोयणम्मि लोगते। तस्स जोयणस्स जे से उवरिल्ले गाउए, तस्स णं गाउ-यस्स जे से उवरिल्ले ..

सादीया अपज्जवसिया

ससार लोन

सासयमणागयमद्ध चिट्ठति

ईषत्प्राग्भारा पृथ्वी के

पर लोकात है। उस योजन का

कोस का जा ऊपर का छठा भाग है वहाँ सिद्ध भगवन्त, जन्म जरा, और मरण प्रधान अनेक योनियो की वदना और ससार म पयटन (=कलङ्कलीभाव=दुख की घबराहट) से बार बार उत्पत्ति-गर्भवास म निवास के प्रपञ्च (=विस्तार) से परे बनकर, शाश्वत अनागत काल में सादि अनन्त रूप से स्थित रहते हैं।

सिद्ध-स्तुति

कहि पडिहया सिद्धा ? कहि सिद्धा पडिट्ठिया ?
कहि बोंदि चइत्ताण ? कत्थ गतूण सिज्झई ॥१॥

सिद्ध कहा रुकते हैं ? सिद्ध कहा स्थित होते हैं ? और कहाँ देह को त्यागकर, कहां जाकर सिद्ध होते हैं ?

अलोगे पडिहया सिद्धा, लोयग्गे य पडिट्ठिया।
इह बोंदि चइत्ताण, तत्थ गतूण सिज्झई ॥२॥

सिद्ध अलोक से रुकते हैं। लोकाग्र पर स्थित होते हैं और मनुष्य लोक मे देह को छोडकर, वहाँ (=लोकाग्र) पर जाकर, कृतकृत्य होते हैं।

ज सठाण तु इहं, भव चय तस्स चरिमसमयमि।
आसी य पएसघण, त सठाण तहि तस्स ॥३॥

मनुष्यलोक के भव के देह में जो प्रदेशघन आकार, अन्तिम समय में बना था, वही आकार उनका वहां पर होता है।

दीह वा हस्स वा, ज चरिमभवे हवेज्ज सठाण ।
तत्तो तिभागहीण, सिद्धाणोगाहणा भणिया ॥४॥

छोटा या बडा, जसा भी अन्तिम भव मे आकार होता है, उससे तीसरे भाग जितने कम स्थान मे सिद्धो की व्याप्ति –जिनेश्वर देव के द्वारा कही गई है ।

तिण्णि सया तेत्तीसा, धणुत्तिभागो य होइ बोधव्वा ।
एसा खलु सिद्धाण, उक्कोसोगाहणा भणिया ॥५॥

तीन सौ ततीस धनुष और धनुष का तीसरा भाग (अर्थात ३२ अगुल) यह सवज्ञ कथित सिद्धो की उत्कृष्ट अवगाहना जानना चाहिए ।

चत्तारि य रयणीओ, रयणित्तिभागूणिया य बोधव्वा ।
एसा खलु सिद्धाण, मज्झिमओगाहणा भणिया ॥६॥

चार हाथ और तीसरा भाग कम एक हाथ (=सोलह अगुल)–यह सवज्ञ कथित सिद्धो की मध्यम अवगाहना जानना चाहिए ।

एगका य होइ रयणी, साहीया अगुलाइ अट्ठ भवे ।
एसा खलु सिद्धाण, जहण्णओगाहणा भणिया ॥७॥

एक हाथ और आठ अगुल अधिक–यह सवज्ञ कथित सिद्धो की जघय अवगाहना है ।

ओगाहणाए सिद्धा, भवत्तिभागेण होइ परिहीणा ।
सठाणमणित्थथ, जरामरणविप्पमुक्काण ॥८॥

सिद्ध, अन्तिम भव की अवगाहना से तीसरे भाग जितनी कम अवगाहनावाले होते हैं। जरा और मरण से विमुक्त मुक्तों का आकार किसी भी लौकिक आकार से नहीं मिलता है (=इत्थ=इस प्रकार+थ=स्थित, अणित्थथ=इस प्रकार के आकारों में नहीं रहा हुआ हो ऐसा)।

जत्थ य एगो सिद्धो, तत्थ अणंता भवक्खयविमुक्का।
अण्णोण्णसमवगाढा, पुट्ठा सव्वे य लोगंते ॥९॥

जहा एक सिद्ध है वहाँ भव के क्षय से विमुक्त, (धर्मास्तिकायादिवत्) अचिन्त्य परिणामत्व से परस्पर अवगाढ अनन्त सिद्ध हैं और सब लोकान्त का स्पर्श कर रहे हैं।

फुसइ अणंते सिद्धे, सव्व पएसेहिं णियमसो सिद्धा।
ते वि असंखेज्जगुणा, देसपएसेहिं जे पुट्ठा ॥१०॥

सिद्ध, निश्चय ही सम्पूर्ण आत्म प्रदेशों से अनन्त सिद्धों का स्पर्श करते हैं और उन सर्वात्म प्रदेशों से स्पष्ट सिद्धों से असंख्य गुण वे सिद्ध हैं-जो देशप्रदेशों से स्पष्ट हैं।

असरीरा जीवघणा, उवउत्ता दंसणे य णाणे य।
सागारमणागारं, लक्खणमेयं तु सिद्धाणं ॥११॥

वे सिद्ध अशरीरी, जीवघन और दर्शन और ज्ञान-इन दोनों उपयोगों में क्रमशः स्थित हैं। साकार (=विशेष उपयोग =ज्ञान) और अनाकार (=सामान्य उपयोग=दर्शन) चेतना -सिद्धों का लक्षण है।

केवलणाणुवउत्ता, जाणंति सव्वभावगुणभावे ।
पासंति सव्वओ खलु, केवलदिट्ठी अणंताहिं ॥१२॥

केवलज्ञानोपयोग से सभी वस्तुओं के गुण और पर्यायों को जानते हैं और अनन्त केवलदृष्टि से सर्वत्र (= चारों ओर से) देखते हैं।

णवि अत्थि माणुसाणं, तं सोक्खं ण वि य सव्वदेवाणं ।
जं सिद्धाणं सोक्खं, अव्वाबाहं उवगयाणं ॥१३॥

न तो मनुष्यों को ही वह सुखानुभव है और न सभी देवों को ही, जो सौख्य अव्याबाध (= बाधा पीड़ा रहित) अवस्था को प्राप्त सिद्धों को है।

जं देवाणं सोक्खं, सव्वद्धापिंडियं अणंतगुणं ।
ण य पावइ मुत्तिसुहं, णंताहिं वग्गवग्गूहिं ॥१४॥

तीनों काल से गुणित जो देवों का सौख्य है उसे अनन्त बार वर्गवर्गित किया जाय, ऐसा वह अनन्तगुण सौख्य भी मुक्तिसौख्य के बराबर नहीं हो सकता है।

सिद्धस्स सुहो रासी, सव्वद्धापिंडिओ जइ हवेज्जा ।
सोऽणंतवग्गभइओ, सव्वागासे ण माएज्जा ॥१५॥

एक सिद्ध के सुख को तीनों काल से गुणित करने पर जो सुख की राशि हो उसे अनन्त वर्ग से भाजित करने पर जो सुख की राशि उपलब्ध होती है वह सुखराशि भी सम्पूर्ण आकाश में नहीं समा सकती।

जह णाम कोइ मिच्छो, नगरगुणे बहुविहे वियाणतो ।
न चएइ परिकहेउ, उवमाए तहिं असंतीए ॥१६॥

जस कोई म्लेच्छ (= जगली मनुष्य) बहुत तरह क नगर के गुणों को जानते हुए भी, वहां (= जगल म) नगर के तुल्य कोई पदार्थ नहीं होने स, नगर के गुणो का कहने में समर्थ नहीं हो सकता है ।

इय सिद्धाणं सोक्खं, अणोवमं णत्थि तस्स ओवम्मं ।
किंचि विसेसेणेत्तो, ओवम्ममिणं सुणह वोच्छं ॥१७॥

वस ही सिद्धो का सुख अनुपम है । यहां उनकी बराबरी का कोई पदार्थ नहीं है । फिर भी कुछ विशेष रूप स उनकी उपमा कहता हूँ—सो सुनो ।

जह सव्वकामगुणियं, पुरिसो भोत्तूण भोयणं कोइ ।
तण्हा-छुहा-विमुक्को, अच्छेज्ज जहा अमियतित्तो ।१८।

जस कि—कोई पुरुष सभी इच्छित गुणो स युक्त भोजन को करके, भूख प्यास स रहित होकर, जस अमित तृप्त (=विषयो की प्राप्ति हो जाने स उत्सुकता की निवृत्ति से उत्पन्न प्रसन्नता से युक्त) हो जाता है ।

इय सव्वकालतित्ता, अतुलं निव्वाणमुवगया सिद्धा ।
सासयमव्वाबाहं, चिट्ठंति सुही सुहं पत्ता ॥१९॥

वस ही सवकाल तृप्त, अतुल शान्ति को प्राप्त सिद्ध शाश्वत और अव्याबाध सुख को प्राप्त

सिद्धत्ति य, बुद्धत्ति य, पारगयत्ति य परपरगयत्ति ।
उम्मुक्ककम्मक्वया, अजरा अमरा असगा य ॥२०॥

वे सिद्ध (=कृतकृत्य) हैं। बुद्ध (=केवलज्ञान से सम्पूर्ण विश्व को जाननेवाले) हैं। पारगत (=भव-सागर से पार पहुँचे हुए) हैं। परम्परागत (=क्रम से प्राप्त मुक्ति के उपाय के द्वारा पार पहुँचे हुए) हैं। उन्मुक्त कर्म कवच (=समस्त कर्मों से मुक्त) हैं। अजर (=बुढ़ापे से रहित) हैं। अमर (मरण से रहित) हैं और असग (सभी क्लेशों से रहित) हैं।

णिच्छिण्ण-सव्व-दुक्खा, जाइजरामरणबंधणविमुक्का ।
अव्वाबाह सुक्ख, अणुहोंति सासय सिद्धा ॥२१॥

सिद्ध सभी दुखों से परे होकर, जन्म, जरा, मरण और बन्धन से मुक्त होकर, अव्याबाध शाश्वत सुख का अनुभव करते हैं।

अतुलसुहसागरगया, अव्वाबाह अणोवम पत्ता ।
सव्वमणागयमद्ध, चि ती सुही सुह पत्ता ॥२२॥

बाधा-पीड़ा से रहित अनुपम अवस्था को प्राप्त होकर समस्त अनागत काल सम्बन्धी सुख को पाकर और अतुल सुख-सागर में लीन बनकर वे सुखी आत्मा स्थित रहते हैं। अर्थात् विभाव-वेदन (=बाधा) का आत्यन्तिक अभाव हुआ, अन्य द्रव्य के सिवाय अन्यत्र दुर्लभ हैं ऐसी अवस्था (=अनुपम) प्राप्त हुई। किन्तु विभाव-वेदन का अभाव होने पर, वेदनमात्र का

अभाव नही होता है-स्वभाव-वेदन का अस्तित्व (=सुही) रहता है। वह स्वभाव-वदन क्षणिक नही, किन्तु समस्त अनागत काल म स्थित रहता है। अत वहा आत्मा आनन्द घन हो जाता है।

(औपपातिक सूत्र से)

नव दरिसणम्मि चत्तारि आउए पच आइमे अते ।
सेसे दो दो भेया खीणमिलावेण इगतीस ॥ (प्रवचन सारोद्धार)

ज्ञानावरणीय कर्म की ५, दर्शनावरणीय की ६ आयु की ४ अन्तराय की ५, और शेष चार कम की दो दो, यो कुल ३१ प्रकृतियो का क्षय करके आत्मा के इक्त्तीस गुण प्रकट करने वाले सिद्ध भगवान को मेरा नमस्कार हो। २३

+सठाण-वण्ण-गध रस फास, तणु-वेय-सग-जणि रहिय ।
एगतीसगुणसमिद्ध, सिद्ध बुद्ध च वदेमो ॥२४॥

-जो परिमण्डलादि पांच सस्थान पाच वर्ण दो गध, पांच रस, आठ स्पर्श, एक काययोग, तीन वेद एक जडसग और एक पुनर्जन्म, इन इक्त्तीस दोषो से रहित होने के कारण उत्पन्न गुणो से समृद्ध हैं उन सर्वज्ञ सिद्ध भगवतो को मैं वन्दना करता हूँ।

जिण अजिण तित्यातित्य,गिहि अन्न-सलिग-थी-नर-नपुसा
पत्तेय-सयबुद्धा, बुद्धवोहि-क्क णिक्का य ॥२५॥ *

+ अन्य प्रकार से ३१ गुण इस गाथा में बताये हैं।
* आगम में और इसके क्रम में अन्तर है।

—१ जिन-तीर्थङ्कर सिद्ध २ अजिन सिद्ध ३ तीर्थ सिद्ध ४ अतीर्थ सिद्ध ५ गृहलिंग ६ अन्यलिंग ७ स्वलिंग ८ स्त्रीलिंग ९ पुरुषलिंग १० नपुंसकलिंग ११ प्रत्येकबुद्ध १२ स्वयंबुद्ध १३ बुद्धबोधित १४ एक सिद्ध १५ अनेक सिद्ध। (इन पन्द्रह भेद से सिद्ध हुए परमात्मा को मैं नमस्कार करता हूँ।)

जिणसिद्ध सयल अरिहा, अजिणसिद्धा य पुंडरियाइ।
गणहारी तित्थसिद्धा, अतित्थसिद्धा य मरुदेवी ।२६।
गिहिलिंगसिद्ध भरहो, ववकलचीरस्स अन्नलिंगम्मि।
साहू सलिंगसिद्धा, थीसिद्धा चंदणापमुहा ॥२७॥
नरसिद्ध गोयमाइ, गंगेयपमुहा नपुंसया सिद्धा।
पत्तेयसयंबुद्धा भणिया करकंडु कविलाई ॥२८॥
इह बुद्धबोहिया खलु, गुरुबोहिया य अणेगविहा।
इग समय एगसिद्धा, इगसमए अणेगसिद्धा य ॥२९॥

—१ सभी जिनवर सिद्ध हुए वे तीर्थङ्कर सिद्ध २ पुंडरीक गणधरादि सामान्य केवली-अतीर्थकर सिद्ध ३ तीर्थ स्थापना के बाद गणधरादि सिद्ध हुए वे-तीर्थ सिद्ध ४ तीर्थ स्थापना के पूर्व मरुदेवी सिद्ध हुए वे-अतीर्थ सिद्ध ५ गृहलिंग सिद्ध भरत * ६ अन्यलिंग सिद्ध-वल्कलचिरी (तापसलिंग में सिद्ध हुए) ७ स्वलिंग सिद्ध-साधु ८ स्त्रीलिंग सिद्ध-चन्दनबाला आदि

* भरतेश्वर गृहलिंग में केवली हुए इस अपेक्षा अन्यथा मरुदेवा ही गृहलिंग में सिद्ध हुई है।

साध्वियें ६ पुरुषलिंग सिद्ध गौतमादि १० नपुंसकलिंग सिद्ध गांगेयादि ११ प्रत्येक बुद्ध–करकंडु आदि १२ स्वयं बुद्ध–कपिलादि १३ बुद्धबोधित–अनेक प्रकार के हैं जो गुरु से प्रतिबोध पाकर सिद्ध हुए १४ एक समय में एक ही सिद्ध हो और १५ एक समय में अनेक सिद्ध हो।

(रत्नत्रय ग्रंथ से)

सिद्धाणं बुद्धाणं पारगयाणं, परम्परगयाणं।
लोअग्गमुवगयाणं, नमो सया सव्वसिद्धाणं ॥३०॥

–जो सिद्ध हैं बुद्ध–सर्वज्ञ हैं, पारगत हैं, परम्परागत हैं और लोकाग्र पर स्थित हैं, उन सभी सिद्ध भगवंतों को मैं सदैव नमस्कार करता हूँ।

णट्ठट्ठमयट्ठाणे, पणट्ठकम्मट्ठणट्ठसंठाणे।
परमट्ठणिट्ठियट्ठे, अट्ठगुणाधिसरं वंदे ॥३१॥

–जिन परमात्मा के आठ प्रकार के मद के स्थान नष्ट हो गए जिन्होंने आठ प्रकार के कर्म और संस्थान को समूल नष्ट कर दिया है और जिन्होंने परमार्थ का पूर्ण रूप से साध लिया है उन आठ गुणों के स्वामी–ईश्वर को मैं वन्दना करता हूँ। (प्रकीर्णक)

जे य अणंता अपुणब्भवाय असरीरया अणाबाहा।
दंसणनाणोवउत्ता, ते सिद्धा दिंतु मे सिद्धिं ॥३२॥

–जो अनंत पुनर्भवरहित, अशरीरी, अव्याबाध हैं,

मान और दर्शन उपयोग से युक्त हैं, वे सिद्ध भगवान् मुझे सिद्धि प्रदान करें।

जे णंतगुणा विगुणा इगतीसगुणा य अहव अट्ठगुणा।
सिद्धाणतचउक्का, ते सिद्धा दिंतु मे सिद्धिं ॥३३॥

–जो अनन्त स्वगुणों से युक्त और पर–जड़ के गुणों से रहित हैं, जो ३१ या ८ गुण तथा अनंतज्ञानादि चतुष्टय सम्पन्न हैं, वे सिद्ध परमात्मा मुझे सिद्ध गति प्रदान करें।

जह नगरगुणे मिच्छो, जाणंतो विहु कहेउमसमत्थो।
तह जेसि गुणे नाणी, ते सिद्धा दिंतु मे सिद्धिं ॥३४

–जिस प्रकार एक जंगली म्लेच्छ नगर के गुण जानता हुआ भी वाणी के द्वारा कहने में समर्थ नहीं है, उसी प्रकार सिद्ध भगवान् के गुण जानते हुए भी ज्ञानीजन वाणी से नहीं कह सकते हैं। वे सिद्ध भगवान् मुझे मुक्ति प्रदान करें।

जे य अणंतमणुत्तर, मणोवम सासय सयाणंद।
सिद्धा सुह सपत्ता, ते सिद्धा दिंतु मे सिद्धिं ॥३५॥

–जो अनन्त, अनुत्तर, अनुपम शाश्वत और सदानन्द ऐसे सिद्ध सुख को प्राप्त कर चुके, वे सिद्ध भगवान् मुझे भी शाश्वत परम सुख प्रदान करें।

(नवपद माहात्म्य पर से)

कम्मट्ठक्खयसिद्धा साहाविअनाण दसण-समिद्धा।
सव्वट्ठलद्धि सिद्धा, ते सिद्धा हुंतु मे सरणं ॥३६॥

पावियपरमाणदा, गुणनीसदा विभिन्न (विद्दण्ण) भवकंदा।
लहुईकयरविचंदा, सिद्धा सरण खविअद्ददा ।४०॥

जिन्होंने परमानन्द प्राप्त कर लिया है, जो ज्ञानादि गुणों के भण्डार हैं, जिन्होंने ससार रूपी कन्द का सर्वथा नाश कर दिया है, जिनके सामने चन्द्र और सूर्य का प्रकाश भी फीका लगता है और जिन्होंने राग और द्वेष रूपी द्वन्द्व को सम्पूर्णतया मिटा दिया है, ऐसे सिद्ध भगवान् का मैं शरण स्वीकार करता हूँ।

उवलद्धपरमबंभा, दुल्लहलंभा विमुक्कसरंभा।
भुवणघरधरणखंभा, सिद्धा सरण निरारंभा ।४१।

जिन्होंने परम ब्रह्म के स्वरूप को प्राप्त कर लिया है, जिन्होंने मुश्किल स साधने योग्य मुक्ति को प्राप्त कर लिया है जो आरम्भ से रहित है और लोक रूप घर को धारण करने के लिए जो स्तम्भ के समान हैं ऐसे सिद्ध भगवान् की मैं शरण स्वीकार करता हूँ। (चउसरणपइन्ना)

नमो अनंत सिद्धाण

सिद्धाणं थुणइ निच्चं, उक्कोसभावसंजुय।
सो सिद्धो हवई तम्हा, नमो अणंतसिद्धाणं ॥१॥

—जो भव्य जीव, उत्कृष्ट भाव से नित्य सिद्ध भगवान की स्तुति करता है, वह भविष्य मे सिद्ध होगा। इस-

लिये मैं मन वचन और काया से अनन्त सिद्ध भगवान् को नमस्कार करता हूँ।

वन्न रस गंध फासा, जाइ सरीर सठाण।
जरामच्चुविप्पमुक्का, नमो अणंतसिद्धाणं ॥२॥

–जिन सिद्ध भगवान् के अन्दर ५ वर्ण, ५ रस, २ गंध, ८ स्पर्श नहीं है। तथा जिनके ५ जाति ५ शरीर, ५ संठाण नहीं है ऐसे अजर, अमर, निरंजन, निराकार सिद्ध भगवान् को बारम्बार नमस्कार करता हूँ।

साईयाणाईया सिद्धा, सव्वे अपज्जवसिया।
पण्णरसविहसिद्धा, नमो अणंतसिद्धाण ॥३॥

–बहुत से सिद्ध सादि हैं क्योंकि इनको मोक्ष में गये हुए थोड़ा काल हुआ है और अनन्त सिद्ध अनादि हैं क्योंकि उनको मोक्ष में गये हुए अनन्त काल हो चुका है। उन सब सिद्धों का अन्त नहीं है अर्थात् वे अजर अमर हैं, वे सिद्ध १५ प्रकार के हैं। एसे सिद्ध भगवान् को नमस्कार करता हूँ।

अयलानिमल्लासिद्धा, सिद्धा बुद्धा पारगया।
परंपरागया सिद्धा, नमो अणंतसिद्धाण ॥४॥

–वे सिद्ध भगवान् अचल तथा अत्यन्त निर्मल हैं। ऐसे सिद्ध भगवान सब तत्त्वों को जानकर संसार सागर से तिर गये हैं। वे परंपरा से मोक्ष में चले जाते हैं। ऐसे अनन्त सिद्ध भगवान् को नमस्कार करता हूँ।

पावियपरमाणदा, गुणनीसदा विभिन्न (विइण्ण) भवकदा।
लहुईकयरविचदा, सिद्धा सरण खविग्रदद्दा ।।४०।।

जिन्होंने परमानन्द प्राप्त कर लिया है, जो ज्ञानादि गुणों के भण्डार हैं, जिन्होंने ससार रूपी कन्द का सर्वथा नाश कर दिया है, जिनके सामने चन्द्र और सूय का प्रकाश भी फीका लगता है और जिन्होंने राग और द्वेष रूपी द्वन्द्व को सम्पूर्णतया मिटा दिया है, ऐसे सिद्ध भगवान की मैं शरण स्वीकार करता हूँ।

उवलद्धपरमबभा, दुल्लहलभा विमुक्कसरभा।
भुवणघरधरणखभा, सिद्धा सरण निरारभा ।४१।

जिन्होंने परम ब्रह्म के स्वरूप को प्राप्त कर लिया है, जिन्होंने मुश्किल से साधने योग्य मुक्ति को प्राप्त कर लिया है जो आरम्भ से रहित है और लोक रूप घर को धारण करने के लिए जो स्तम्भ के समान हैं, ऐसे सिद्ध भगवान् की मैं शरण स्वीकार करता हूँ। (चउसरणपइन्ना)

नमो अनत सिद्धाण

सिद्धाण थुणइ निच्च, उक्कोसभावसजुय।
सो सिद्धो हवई तम्हा, नमो अणतसिद्धाण ।।१।।

–जो भव्य जाव, उत्कृष्ट भाव से नित्य सिद्ध भगवान् की स्तुति करता है, वह भविष्य मे सिद्ध होगा। इस-

लिये मैं मन वचन और काया से अनन्त सिद्ध भगवान् को नमस्कार करता हूँ।

वन्न रस गध फासा, जाइ सरीर सठाण।
जरामच्चुविप्पमुक्का, नमो अणतसिद्धाण ॥२॥

–जिन सिद्ध भगवान् के अन्दर ५ वण, ५ रस, २ गध, ८ स्पर्श नहीं है। तथा जिनके ५ जाति ५ शरीर, ५ सठाण नही है ऐसे अजर अमर, निरजन, निराकार सिद्ध भगवान् को वारम्वार नमस्कार करता हूँ।

साईयाणाईया सिद्धा, सव्वे अपज्जवसिया।
पण्णरसविहसिद्धा, नमो अणतसिद्धाण ॥३॥

–बहुत से सिद्ध सादि हैं क्योकि इनका मोक्ष म गये हुए थोडा काल हुआ है और अनन्त सिद्ध अनादि हैं क्योंकि उनको मोक्ष में गये हुए अनन्त काल हो चुका है। उन सब सिद्धो का अन्त नही हैं अर्थात व अजर अमर हैं व सिद्ध १५ प्रकार के हैं। एसे सिद्ध भगवान् को नमस्कार करता हूँ।

अयलानिमल्लासिद्धा, सिद्धा बुद्धा पारगया।
परपरागया सिद्धा, नमो अणतसिद्धाण ॥४॥

–वे सिद्ध भगवान् अचल तथा अत्यन्त निमल है। ऐसे सिद्ध भगवान् सब तत्त्वो को जानकर ससार सागर से तिर गये हैं। वे परपरा से मोक्ष मे चले आते हैं। ऐसे अनन्त सिद्ध भगवान् को नमस्कार करता हू।

दव्वऊ श्रणत सिद्धा, उड्ढं लोएग्गे खित्तऊ ।
कालउ सासया सिद्धा, नमोश्रणतसिद्धाण ॥५॥

–द्रव्य मे सिद्ध अनन्ता है, क्षेत्र से उध्वलोक के अग्रभाग मे हैं। काल स श्रजर श्रमर हैं, ऐसे श्रनत सिद्ध भगवान् का नमस्कार करता हूँ।

भावउ केवलनाणी, तह केवलदसणी ।
सव्वदुक्खविप्पमुक्का, नमो श्रणतसिद्धाण ॥६॥

–भाव से सिद्ध भगवान् केवल ज्ञान तथा केवल दशन सहित हैं श्रौर सब दुखो से मुक्त हैं, ऐस श्रनन्त सिद्ध भगवान् को नमस्कार करता हूँ।

उसभमजिय मते, सभव मभिनदण ।
सुमइ च समःउय, नमो श्रणत सिद्धाण ॥७॥

–इस अवसर्पिणी काल में जो सिद्ध हो चुके हैं उनमें से मैं कुछ का नाम उपस्थित करता हूँ। वे इस प्रकार हैं। ऋषभदेव, अजितनाथ, सभवनाथ, श्रभिनन्दन, श्रौर सुमतिनाथ सहित श्रनन्त सिद्धो को नमस्कार करता हूँ।

पउमप्पह सुपास, ससि सुविहि सियल ।
सिज्जससमाउय, नमो श्रणतसिद्धाण ॥८॥

–पद्मप्रभ, सुपार्श्वनाथ, चन्द्रप्रभ सुविधिनाथ, सीतलनाथ, श्रेयासनाथ, उनके सहित श्रनन्त सिद्ध भगवान् को नमस्कार करता हूँ।

यासपुज्ज विमल मणत, धम्मं संति च कुथुण ।
अर मल्लि समाउय, नमो अणतसिद्धाण ॥६॥

—वासुपूज्य, विमलनाथ अनन्तनाथ, धर्मनाथ, शान्ति नाथ, कुंथुनाथ, अरनाथ, मल्लिनाथ सहित अनन्त सिद्धा को नमस्कार करता हूँ ।

मुणिसुव्वय नमि, अरिट्ठनेमि पासेण ।
वद्धमाणसमाउय, नमो अणतसिद्धाण ।१०।

—मुनिसुव्रत, नमिनाथ अरिष्टनेमि, पार्श्वनाथ, वर्धमानस्वामी सहित अनन्त सिद्धों को नमस्कार करता हूँ ।(ये चौबीस तीर्थंकर इस भरत क्षेत्र में हुवे । अब एरवय क्षेत्र के तीर्थंकरों को नमस्कार करता हूँ ।)

चन्दाणण सुचन्देण, अग्गीसेणए ।
नन्दीसेणसमाउय, नमो अणतसिद्धाण ।११।

—चन्द्रानन, सुचन्द्र, अग्निसेन, नन्दीसेन, सहित अनन्त सिद्धों को नमस्कार करता हूँ ।

इसिदिण्ण वयहारि, भगव सोमचन्देण ।
जुईसेणसमाउय, नमो अणतसिद्धाण ।१२।

—ऋषिदिन्न, व्रतधारी सोमचन्द्र, युक्तिसेन सहित अनन्त सिद्धों को नमस्कार करता हूँ ।

भगवं अज्जोयसेण, सिवसेणेण वन्दामि ।
देवसम्मसमाउय, नमो अणतसिद्धाण ।१३।

—अजितसेन शिवसेन, देवश्रम सहित अनंत सिद्धों को नमस्कार करता हूँ।

भगव णिक्खित्तसत्थ, असजलेण य वदामि।
जिणवसमसमाउय, नमो अणतसिद्धाण ।१४।

—निक्षिप्तशस्त्र, अश्वजल, जिनवृषभ सहित अनंत सिद्धों को नमस्कार करता हूँ।

उवसत गुत्तीसेण, अइपास सुपासेण।
मरुदेवसमाउय, नमो अणतसिद्धाण ।१५।

—उपशान्त, गुप्तिसेन, अतिपार्श्व, सुपार्श्व, मरुदेव सहित अनत सिद्धो को नमस्कार करता हूँ।

धर च सामकोट्ठ च, अग्गीसेणग्गीपुत्तेण।
वारिसेणसमाउय, नमो अणतसिद्धाण ।१६।

—धर और सामकोष्ठ, अग्निसेन, अग्निपुत्र वारीसेन सहित अनत सिद्धो को नमस्कार करता हूँ।

वदामि उसभसेण, सिहसेणे य चारुण।
वज्जनाभसमाउय, नमो अणतसिद्धाण ।१७।

—ऋषभसेन, सिंहसेन, चारु, वज्रनाभ, इन अनन्तसिद्धो को नमस्कार करता हूँ।

चमरसुवय वन्दे, विदभदीण्णकण्णेण।
वारु आणद समाउय, नमो अणतसिद्धाण ।१८।

–चमर, सुव्रत विदर्भ, दीन, वण, वाह, आनन्द, ०

गोथूभ सुहम्म वदे, मदर जसोहर रिट्ठं ।
चक्काउयसमाउय, नमो० ॥१९॥

गोथूभ, सुधम, मन्दर यशोधर, रिष्ट चक्रायुद्ध ०

सयमू कुम्भ भोसय, इदकुम्भेण वदामि ।
सुमवरणसमाउय, नमो० ॥२०॥

–सयमू, कुम्भ, भिपर, इन्द्रकुम्भ, शुभकरण ०

वरदत्त दिणसुम, अज्जघोस च वासिट्ठ ।
वम्भयारिसमाउय, नमो० ॥२१॥

–वरदत्त, दीन सुम आय धाय, वाशिष्ट ब्रह्मचारी ०

सोमे सिरिधरे वंदे, वीरभद्द जसभद्देण ।
इदभूइसमाउय, नमो० ॥२२॥

–साम, श्रीधर वीरभद्र यशाभद्र, इन्द्रभूति ०

अग्गीभूइ वाउभूइ, वीयत्त सुहम्मसुय ।
मडिपुत्तसमाउय, नमो०॥२३॥

–अग्निभूति, वायुभूति, व्यक्तस्वामी, सुधर्मास्वामी, मडितपुत्र ०

मोरीपुत्त अकंपिय, अयलभाय मेयज्जे ।
पभास च समाउय, नमो० ॥२४॥

–मौर्यपुत्र, अकम्पित, अचलभ्रात, मतार्य, प्रभास ०

वदे एरवय खलू, भरहे बाहुबलिण ।
सेसामाउसमाउय, नमो० ॥२५॥
–एरवय क्षेत्र के प्रथम एरवय चक्रवर्ती, भरत और बाहुबलि (ये ऋषभदेव के पुत्र शेष) अठयानवे भाई ०
आईच्चजस्समहाजस्स, अईबलमहाबलेण ।
तेयवीरिएसमाउय, नमो० ॥२६॥
–आदित्ययश, महायश, अतिबल, महाबल, तेजवीर्य ०
भते कित्तिवीरियेण, वन्दामि दण्डवीरिय ।
जलवीरिएसमाउय, नमो० ॥२७॥
–कीर्तिवीर्य, दण्डवीर्य, जलवीर्य ० (ये भरतेश्वर के आठ पट्टधर थे)
सागरमघव वन्दे, सणकुमारमहापउम ।
हरिसेणसमाउय, नमो० ॥२८॥
–सागर, मघव, सनतकुमार महापद्म हरीसेण ०
जय अयल विजय, तओ भद्द सुपभेण ।
सुदसणसमाउय, नमो० ॥२९॥
–जय अचल, विजय, भद्र, सुप्रभ, सुदर्शन ०
आनन्दनदण वन्दे, पउमकविलहरिएसिण ।
तओ चित्तसमाउय, नमो० ॥३०॥
–आनन्द, नन्दन, पद्म (ये अचल आदि आठ बलदेव थे) कपिल, हरिकेशी, चित्त ०

देवभद्दजसोभद्द, उसुयार च भग्गुण ।
करकण्डूसमाउय, नमो० ॥३१॥

–देवभद्र, यशोभद्र (ये पुरोहित के पुत्र थे) इषुकार राजा, भृगु पुरोहित, करकण्डू ०

दुम्मुहे नमि णग्गइ, मगव महाबलेण ।
मियापुत्तसमाउय, नमो० ॥३२॥

–दुम्मुह, नमिराज नग्गई, महाबल, मृगापुत्र ०

सजयदसण्णभद्द, अणाहि रहनेमिण ।
समुद्दपालसमाउय, नमो० ॥३३॥

–सजति, दसारणभद्र, अनाथिमुनि, रहनेमि, समुद्रपाल०

केसि जयघोस भते, विजयघोस गग्गेण ।
कालासवेसिपुत्ताई, नमो० ॥३४॥

–केशिमुनि, जयघोष, विजयघोष, गर्गाचार्य, काला सवसितपुत्र ०

कालोदाइण गगेय, सिव उसभदत्तेण ।
सुदसणपोग्गलाइ, नमो० ॥३५॥

–कालोदाई, गगेय, शिवराज ऋषि, ऋषभदत्त, सुदर्शन, पुद्गल ०

मत्ते उदायण यदे, तहा थावच्चापुत्तेण ।
तओ सुए समाउय, नमो० ॥३६॥

–उदायन, थावरचापुत्र, शुकदेव ०

वदामि सेलय भन्ते, पयए बल भगव ।

पडिबुद्धसमाउय, नमो० ॥३७॥

–सेलक, पथक बल प्रतिबुद्ध ०

चन्दछाए रुवि वन्दे, सल अदिणसत्तूण ॥

जियसत्तूसमाउय, नमो० ॥३८॥

–चन्द्रछाय, रूगी, सघ अदीनशत्रु, जितशत्रु ०

सुबुद्धि जियसत्तुए, तेयलीपुत्त भगव ।

मुणिसुव्वयसमाउय, नमो० ॥३९॥

–सुबुद्धि, जितशत्रु तेतलीपुत्र मुनिसुव्रत ० (ये धातकी खड के तीर्थंकर थे)

जुहिट्ठिल्लभीमसेण, अज्जुण नउलेसुए ।

सहदेवसमाउय, नमो० ॥४०॥

–युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्जुन नकुल, सहदेव ०

नमि मायग वदामि, सोमिल रामगुत्तेण ।

सुदसणसमाउय, नमो० ॥४१॥

–नमि, मातग, सोमिल , सुदर्शन ०

जमाली भगाली

अमडपुत्तसमाउय,

–जमाली भगाली,

गोयमसमुद्द वंदे, सागर तहा गभीर ।
थिमिय अयल एय, नमो० ॥४३ ।
–गौतम, समुद्र सागर, गम्भीर स्थिमित अचल ०
कविल अक्खोभ वंदे, तहा वसेण विण्हूण ।
अक्खोभ सागर एव, नमो० ॥४४॥
–कम्पिल, अक्षोभ, प्रसेन, विष्णु अक्षोभ सागर ०
समुद्द हेमवतेण, अयल धरण पुरणेण ।
अभिचंदसमाउय, नमो० ॥४५॥
–समुद्र, हेमवन्त, अचल, धरण, पूरण, अभिचन्द्र ०
वदामि अणियसेण, तहा अणतसेणेण ।
अजीयसेणसमाउय, नमो० ॥४६॥
–अनिकसेन, अनतसेन अजितसेन ०
वंदे अणिहयरिउ, देवसेण सत्तुसेणेण ।
सारणेणसमाउय, नमो० ॥४७॥
–अनिहतरिपु देवसेन, शत्रुसेन, सारण ०
गयसुहमाल वंदे, सुमुह दुमुह तहा ।
कुवय दारय एव, नमो० ॥४८॥
–गजसुकुमाल सुमुख दुमुख, कूपक, दारक ०
अणाहिट्ठी जाली वंदे, मयाली उवयालीय ।
पुरिससेणसमाउय, नमो० ॥४९॥
–अनाधृष्टि, जालि, मयालि, उवयाली, पुरिससेन ०

–उदायन, थावरचापुत्र, शुकदेव ०

वदामि सेलय भन्ते, पथए वल भगव ।
पडिवुद्धसमाउय, नमो० ॥३७॥

–सेलर, पथक वल प्रतिवुद्ध ०

च दछाए रुवि वन्दे, सल अविणसत्तूण ॥
जियसत्तूसमाउय, नमो० ॥३८॥

–चद्रछाय, रूपी, सम अदीनशत्रु जिनदात्तु ०

सुबुद्धि जियसत्तुए, तेयलीपुत्त भगव ।
मुणिसुव्वयसमाउय, नमो० ॥३९॥

–सुवुद्धि, जिनदात्तु, तेतलीपुत्र, मुनिसुव्रत ० (ये धातकी खड के तीर्थंकर थे)

जुहिट्ठिल्लभीमसेण, अज्जुण नउलेसुए ।
सहदेवसमाउय, नमो० ॥४०॥

–युधिष्ठिर, भीमसेन, अर्जुन, नकुल, सहदेव ०

नमि मायग वदामि, सोमिल रामगुत्तेण ।
सुदसणसमाउय, नमो० ॥४१॥

–नमि, मातग, सोमिल, रामगुप्त, सुदर्शन ०

जमाली मगाली वदे, भते किंकम्मफालिए ।
अमडपुत्तसमाउय, नमो० ॥४२॥

–जमाली, मगाली, किंकम, फालिन, अम्बडपुत्र ०

गोयमसमुद्द वदे, सागर तहा गभीर ।
थिमिय प्रयल एव, नमो० ॥४३॥
–गौतम, समुद्र सागर, गम्भीर स्थिमित अचल ०
कविल प्रयखोभ वदे, तहा पसेण विण्णूण ।
प्रयलोभ सागर एव, नमो० ॥४४॥
–कम्पिल, प्रगोभ, प्रसेन, विष्णु प्रगाभ, सागर ०
समुद्द हेमवतेण, प्रयल धरण पुरणेण ।
अभिचदसमाउय, नमो० ॥४५॥
–समुद्र, हेमवन्त, अचल, धरण, पूरण, अभिचन्द्र ०
वदामि अणियसेण, तहा प्रणतसेणेण ।
प्रजीयसेणसमाउय, नमो० ॥४६॥
–अनिकसेन, अनतसेन अजितसेन ०
वदे प्रणिहयरिउ, देवसेण सत्तुसेणेण ।
सारणेणसमाउय, नमो० ॥४७॥
–अनिहतरिपु, देवसेन, शत्रुसेन, सारण ०
गयसुहमाल वदे, सुमुह दुमुह तहा ।
कुवय दारय एव, नमो० ॥४८॥
–गजसुकुमाल सुमुख दुमुख, कूपक, दारक ०
प्रणाहिट्ठी जाली वदे, मयाली उवयालीण ।
पुरिससेणसमाउय, नमो० ॥४९॥
–अनादृष्टि, जालि, मयालि, उवयाली, पुरिससेन ०

वदामि वारीसेणेण, पज्जूण च पुणो पुणो ।
भते सव समाउय, नमो० ॥५०॥
–वारिसेन पद्युम्न, शाम्ब ०
अणिरुद्धेण वदामि, भगव सच्चनेमिण ।
दढनेमिसमाउय, नमो० ॥५१॥
–अनिरुद्ध, सत्यनेमि दृढनेमि ०
मक्काई किकम वन्दे, अज्जुण तहा कासव ।
खेम धितिधर एव, नमो० ॥५२॥
–मक्काई, किंक्म, अर्जुन काश्यप, क्षेम धृतिधर ०
केलास हरिचदेण, वारतेण सुदसण ।
पुण्णभद्दसमाउय, नमो० ॥५३॥
–कैलाश हरिचन्दन वारत्त, सुदर्शन, पूर्णभद्र ०
वदामि सुमणभद्द, तओ विय सुपइट्ठ ।
तओ मेहस्स सजुय, नमो० ॥५४॥
–सुमनभद्र, सुप्रतिष्ठ, मेघ ०
बालबभयारि खलु, वदामि अईमुत्तेण ।
तओ अलक्खसजुय, नमो० ॥५५॥
–बालब्रह्मचारी अतिमुक्त मुनि, अलक्ष ०
सिज्जस बभदत्त, सुरिददत्त भगव ।
इददत्त समाउय, नमो० ॥५६॥
–ब्रह्मदत्त, सुरिंद्रदत्त इन्द्रदत्त ०

वदामि पउम भते, सोमदेवेण महिद ।
सोमदत्तसमाउय, नमो० ॥५७॥
–पद्म, सामदेव महेन्द्र, सामदत्त ये। (तिलोक ऋषीजी कृत प्रतिक्रमण, नतव वाद्य) ०
सुवासव तहा खलु, भगव महचदेण ।
येसमणसमाउय, नमो० ॥५८॥
–सुवासव, जिनदास, वश्रमण ०
महाबल भद्दनदि, भगव महचदेण ।
सओ जबू समाउय, नमो० ॥५९॥
–महाबल, भद्रनदी महचन्द्र (ये छह सुखविपाक या तेरा ढाला के अदर है) जम्बु ०

साध्वियें

मरुदेवाभगवई, विजयसेणा सिद्धत्या ।
सुमगलासमाउय नमो० ॥६०॥
–मरुदवी, विजयसेना, सिद्धार्थ, सुमगला ०
सुसीमा पुढवी खलु, वदामि लखमावई ।
जिणमायासमाउय नमो० ॥६१॥
–सुसिमा, पृथ्वी, लखमावती (ये आठ जिन माता थी)
बभी सुदरी फग्गुणी, सामा अजिया कासवी ।
रइ सोमा सुमीणाई, नमो० ॥६२॥

–ब्राह्मी, सुन्दरी फाल्गुणी, श्यामा, अजिया, वासवी, रति सोमा सुमिणा ०

वारुणि सुलसा वन्दे, धारणि धरणि तहा।
धरणिधरासमाउय, नमो० ॥६३॥

–वारुणी सुलसा, धारणी, धरणी, धरणिधरा ०

पउमा सिवा सुयाण, अजुरक्खा बधुवइ।
पुप्फवईसमाउय, नमो० ॥६४॥

–पद्मावती, शिवानदा, सुरजा अजु, रक्षा, बधुवती, पुप्पवती ०

अमिला जक्खीणि वन्दे, पुप्फचूला उ चदणा।
जिणसिस्सिणीसमाउय, नमो० ॥६५॥

–अमिला, यक्षिणी पुप्पचूला, चदनबाला, (य ब्राह्मी से चदनबाला तक तीर्थङ्करा की बडा शिष्यणी थी) ०

जस्सा भगवई य दे, तहेव कमलावई।
राईमईसमाउय, नमो० ॥६६॥

–जस्सा कमलावती, राजमती ०

देवानदाउ वदामि, जयतीवि तहेवय।
मियावईसमाउय, नमो० ॥६७॥

–देवानदा, जयती, मृगावती ०

पउमावई गोरीण, तहा गधारी लक्खणा।
सुसीमाउसमाउय, नमो० ॥६८॥

—पद्मावती, गौरी, गन्धारी, लक्ष्मणा, सुसिमा ०

जम्बुवई सच्चभामा, रुप्पिणी मूलसिरिण ।
मूलदत्तासमाउय, नमो० ॥६६॥

—जम्बूवती, सत्यभामा, रुक्मणी, (ये आठ कृष्ण की पटरानियाँ थीं) मूलश्री और मूलदत्ता (ये दो शाम्ब कुमार की स्त्रियाँ थीं) ।

नंदा नंदवई वन्दे, भगवई नंदुत्तरा ।
नंदीसेणासमाउय, नमो० ॥७०॥

—नन्दा, नन्दवती, नंदुत्तरा नंदासेना ०

मरुत्ता सुमरुत्ताण, महामरुत्ता वंदामि ।
मरुदेवासमाउय, नमो० ॥७१॥

—मरुता, सुमरुता, महामरुता, मरुन्वा ०

भद्दा सुभद्दा सुजाया, वंदामि सुमणाइया ।
भूयदिण्णासमाउय, नमो० ॥७२॥

—भद्रा सुभद्रा, सुजाया, सुमणायका, भूतदिन्ना ०

काली सुकाली महाकाली, वंदामि कण्हा सुकण्हा ।
महाकण्हासमाउय, नमो० ॥७३॥

—काली, सुकाली महाकाली, कृष्णा सुकृष्णा महाकृष्णा ०

वीरकण्हा रामकण्हा, पिउसेणकण्हा तहा ।
महासेणकण्हा एव, नमो० ॥७४॥

–वीरकृष्णा, रामकृष्णा पिउसेनकृष्णा, महासेनकृष्णा (ये तेईस श्रेणिक राजा की रानियाँ थी) ०

सति पच्चुप्पन्नकाले, विदेह जिणवरिन्दा ।
जुगबाहुप्पमुहा, वदामि भगवताण ॥७५॥

–वतमान समय मे महाविदेह क्षत्र मे युगबाहु आदि जितने भी तीथकर भगवान् विराजमान हैं, उनको मैं बार बार व दना नमस्कार करता हूँ ।

अजिणाजिणसकासा, चउदसपुव्वधरा ।
भगव गणहराण, वदामि चउनाणिण ॥७६॥

–वतमान समय मे ४ ज्ञान, १४ पूवधर, जिन नही किंतु जिन सरिख एसे जितने भी गणधर महाराज विचरते हैं उनको मैं बारम्वार व दना नमस्कार करता हू ।

गणी आयरिया खलु, तहेव उवज्झायाण ।
परमट्ठीमहासाहू, वदामि अवसेसाण ॥७७॥

–अढाई द्वीप प द्रह क्षेत्र म वतमान समय मे जितने भी गणी, आचाय उपाध्याय और मोक्ष के साधनेवाले साधु महाराज विचरते हैं उन सब पूज्यवरो को बारम्वार व दना नमस्कार करता हूँ ।

कुडफासगयामिगा, जालगया व मच्छगा ।
पखो व पजर गया, एव अहपि ससारे ॥७८॥

—फांस में फँसा हुआ मृग जाल में फँसा हुआ मच्छ और पिंजर में फँसे हुए पक्षी की भांति मैं भी जन्म जरा और मरण की फांस में फँसा हुआ मति घबरा कर के सिद्ध भगवान् की स्तुति करता हूँ।

अक्खयनाणजणणी, गुणरयणधारणी।
सिवरोहण उज्जुसेढि, चक्कीदलण दुमई।७६।

—यह स्तुति अक्षय ज्ञान की जननी है और गुणरत्न का धराने वाला है। यह मोक्ष महल में जाने का सीढ़ी और दुर्मति का दलने के लिये चक्की के समान है।

दरिद्दभजण लच्छी, वाहीभजण ओसही।
कम्मवण दहणग्गी, थुई मगल नायवो ॥८०॥

—यह स्तुति पापरूप दारिद्र्य का क्षय करने के लिये महालक्ष्मी के समान है। राग शोक व्याधि और वेदना क्षय करने के लिये परम औषधी है। अष्ट कर्म रूप वन को दहन करने के लिये महा प्रचण्ड अग्नि है।

निट्ठियट्ठा भविस्सामि, देवगुरुपसायेणं।
थुई नाय समारुढो, पार ससारसागरे ॥८१॥

—मैं देव गुरु और धर्म के प्रसाद से इस स्तुति रूपी नौका पर आरूढ होकर इस संसार सागर से अवश्य ही तिर जाऊँगा।

भणइ सुणइ एव, सया पभाये भाणवा ।
अपुव्वसमाहिट्ठाण, लभिस्सती न ससय ॥८२॥

–इस स्तुति को प्रतिदिन प्रात काल जो कोई प्राणी पढ़ेगा या सुनेगा वह मोक्ष की अपूर्व समाधि प्राप्त करेगा, इसमें सन्देह नहीं है।

जे मे अक्खरमायावि, सम नो सन्निवाइया ।
त सम करउ भते, सुयसागर पारगा ॥८३॥इति॥

–इस स्तुति मे कोई भी अक्षर बिन्दु मात्रा इत्यादि अशुद्ध हो, उन्हे बहुसूत्री मुनि महाराज शुद्ध करने की कृपा करेंगे।

× × × × ×

ध्मान सित येन पुराण कर्म,
यो वा गतो निर्वृति सौधमूर्ध्नि ।
ख्यातोऽनुशास्ता परिनिष्ठितार्थो,
य सोऽस्तु सिद्ध कृतमगलो मे ॥१॥

–जिन्होने पूर्वभवो मे बाधे हुए पुराने कर्मों को जला कर भस्म कर दिये हैं, जो मुक्ति महल के उच्च शिखर पर पहुँच गये हैं, जो प्रख्यात हैं नियता हैं और कृतकृत्य हैं, वे सिद्ध भगवान् मेरे लिए मगलकारी होवे ।

परमात्म स्तोत्र

शिवं शुद्धबुद्धं परं विश्वनाथं,
न देव न बन्धु न कर्माणि कर्ता ।
न अंगं न संगं न इच्छा न कायं,
चिदानन्दरूपं नमो वीतरागं ।१।

न बन्धो न मोक्षो न रागादि लोकं,
न योगं न भोगं न व्याधिर्न शोकं ।
न कोपं न मानं न माया न लोभं । चिदा ।२।

न हस्तौ न पादौ न घ्राणं न जिह्वा
न चक्षुर्न कर्णं न वक्त्रं न निद्रा ।
न स्वेद न खेद न वर्ण न मुद्रा । चिदा ।३।

न जन्मा न मृत्युर्न मोह न चिन्ता,
न क्षुत्तृट न भीत न कार्श्य न तन्द्रा ।
न स्वामी न भृत्यो न देवो न मर्त्य । चिदा ।४।

त्रिदण्डे त्रिखण्डे हरे विश्वनाथं,
हृषीकेश विध्वस्त कर्मादिजालं ।
न पुण्यं न पापं न अज्ञान भाव । चिदा ।५।

न बाल्यं न वृद्ध न विज्ञान मूढा,
न छेद न भेद न मूर्तिन क्षोभ ।
न कृष्णा न शुक्ल न मोह न तन्द्रा । चिदा ।६।

न आद्य मध्यं न अन्त न मन्या,
न द्रव्यं न क्षेत्र न दृष्टो :
गुरुर्नैव शिष्यो न

इद ज्ञानरूप स्वय तत्ववेदी,
न पूर्ण न शून्य स घत्यरूप ।
अन्यो विभिन्न न परमार्थमेक । चिदा ।८।

॥ नमो सिद्ध निरजन ॥

तुम तरण तारण दु ख निवारण भविक जन आराधन ।
श्री नाभिनदन जगत वदन, नमो सिद्ध निरजन ।१।
जगत भूषण विगत दूषण प्रवण प्राण निरूपक ।
ध्यान रूप अनूप उपम ॥नमो०॥ ।२।
गगन मडल मुक्ति पदवी सव ऊर्ध्व निवासन ।
ज्ञान ज्योति अनत राजे ॥नमो०॥ ।३।
अज्ञान निद्रा विगत वेदन दलित मोह निरायुष ।
नाम गोत्र निरतराय ॥नमो०॥ ।४।
विगट क्रोधा मान योधा माया लोभ विसजन ।
राग द्वेष विमद् अकुर ॥नमो०॥ ।५।
विमल केवल ज्ञान लोचन ध्यान शुक्ल समीरित ।
योगिनाऽतिगम्यरूप ॥नमो०॥ ।६।
योग ने समोसरण मुद्रा परी पर्यंकासन ।
सव दीसे तेज रूप ॥नमो०॥ ।७।
जगत जिन के दास दासी तास आस निरासन ।
चन्द्र प परमानन्द रूप ॥नमो०॥ ।८।

स्व समय समकित दृष्टि जिनकी सोहे योगी अयोगिक ।
देखतामां लीन होवे ॥नमो०॥ ।६।

तीर्थ सिद्धा अतीर्थ सिद्धा भेद पचदशाधिक ।
सब कर्म विमुक्त चेतन ॥नमो०॥ ।१०।

चद्र सूर्य दीप मणिकी ज्योति येन उलघित ।
ते ज्योतियी पण परम ज्योति ॥नमो०॥ ।११।

एक मांहि अनेक राजे अनेक माहि एकक ।
एक अनेक की नाहि सख्या ॥नमो०॥ ।१२।

अज अमर अलक्ष अनतर निराकार निरजन ।
परिब्रह्म ज्ञान अनत दशन ॥नमो०॥ ।१३।

अतुल सुख की लहर में प्रभु लीन रहे निरतर ।
धर्म ध्यान थी सिद्ध दशन ॥नमो०॥ ।१४।

ध्यान धूप मन पुष्प पचेन्द्रिय हुताशन ।
क्षमा जाप सतोष पूजा पूजो देव निरजन ।१५।

तुमे मुक्ति दाता कर्म घाता दीन जाणी दया करो ।
सिद्धाय नदम जगत वदन महावीर जिनेश्वरो ।१६।

॥ सेवो सिद्ध सदा जयकार ॥

सेवो सिद्ध सदा जयकार, जासे होय मगलाचार ।टर।
अज अविनाशी अगम अगोचर, अमल अचल अविकार
अन्तर्यामी त्रिभुवन स्वामी, अमित शक्ति भण्डार । से

कर वणट्ठ धम्मट्ठ अट्ठ गुण, युक्त मुक्त संसार ।
पायो पद परमिट्ठ तास पद, वन्दो वारम्वार । से ।२।
सिद्ध प्रभु को सुमिरन जग में, सकल सिद्धि दातार ।
मन वाञ्छित पूरन सुरतरु सम, चिन्ता चूरनहार । से ।३।
जप जाप योगीश रात दिन, ध्यावें हृदय मझार ।
तीर्थङ्करहू प्रणमे उनको, जब होवे अनगार । से ।४।
सूर्योदय के समय भक्तियुत, थिर चित्त दृढता धार ।
जपे सिद्ध यह जाप तास घर, होवे ऋद्धि अपार । से ।५।
सिद्ध स्तुति ये पढ़े भाव से, प्रति दिन जे नरनार ।
सो दिव शिव सुख पावे निश्चय, बने रहें सरदार । से ।६।
'माधव मुनि' कहे सकल संघ में, बढ़े हमेशा प्यार ।
विद्या विनय विवेक सर्म वत, पावे प्रचुर प्रचार । से ।७।

जय जय जय भगवान्

जय जय जय भगवान् ।
अजर अमर अखिलेश निरंजन, जयति सिद्ध भगवान् ॥टेर॥
अगम अगोचर तू अविनाशी, निराकार निर्भय सुख राशि ।
निर्विकल्प निर्लेप निरामय, निष्कलंक निष्काम ॥ ज० १ ॥
कर्म न काया मोह न माया, भूख न तिरषा रंक न राया ।
एक स्वरूप अरूप अगुरुलघु, निर्मल ज्योति महान् ॥ २ ॥

हे अनंत हे अंतर्यामि, अष्ट गुणों के धारक स्वामी।
तुम बिन दूजा देव न पाया, त्रिभुवन में अभिराम ॥ ३ ॥
गुरु निग्रंथों ने समझाया, सच्चा प्रभु का रूप बताया।
तुझमें मुझमें भेद न पाऊं, ऐसा दो वरदान ॥ ४ ॥
'सुखमानु' है शरण तिहारी, प्रभु मेरी करना रखवारी।
अब तुम में ही मिलजाऊं म, ऐसा हो साधान ॥ ५ ॥

सिद्ध स्थान वर्णन

श्री गौतमस्वामी पुच्छा करे, विनय करी सीस नमाय प्रभुजी।
अविचल थानक मैं सुण्या, कृपाकरी माय बताय प्रभुजी॥
शिवपुर नगर सुहामणा। टेर०। १।
आठ करम अलगा करी, सार्या आतमकाज प्रभुजी।
छुट्या संसार ना दुःख थकी, तहने रहेवानु किहां ठाम प्र शि २
वीर कहे ऊर्ध्वलोकमां सिद्धशिला तणु ठाम हो गौतम।
स्वर्ग छावीस नी ऊपर, तहना बार नाम हो गौतम। शि ३।
लम्ब पैंतालीस योजन लाबी पहोली जाण हो गौतम।
आठ योजन जाडी बीचे छेह माखी पाख समान हो। गौ ४।
उज्ज्वल हार मोतीतणो, गो-दूध शंख वखाण हो गौतम!
तिणसु अधिकी उजली, उलट छत्र संठाण हो। गौ ५।
अर्जुन स्वर्ण सम दीपती, घटारी मठारी जाण हो गौतम!
फटिक रतन थकी निर्मली, सुवाली अत्यंत वखाण हो

—: नंदी स्तुति :—

वीर प्रभु की स्तुति

ाइ जग-जीव-जोणी वियाणओ, जग-गुरू जगाणदो ।
ा णाहो जग-बंधू, जयइ जग-प्पिया-महो भयवं ।१।

जग जीव तथा योनि के ज्ञाता अर्थात् सर्वज्ञ सर्वदर्शी
त् गुरु, विश्व के वल्लभ, षड्काय जीवों के नाथ, चराचर
बंधु तथा लोक पितामह भगवान जयवन्त हैं।

जयइ सुआण पभवो, तित्थयराण अपच्छिमो जयइ ।
जयइ गुरू लोगाण, जयइ महप्पा महावीरो ।२।

श्रुतज्ञान रूपी प्रवाह का पनावर समाज के मोह
धकार को नष्ट करने वाले अंतिम तीर्थंकर महात्मा श्री
ावार की विजय हो।

भद्द सव्व-जगुज्जोयगस्स, भद्द जिणस्स वीरस्स ।
भद्द सुरासुर-नमंसियस्स, भद्द धुय रयस्स ।३।

सारे जगत को अपनी चांदनी से उद्योतित करने वाले,
म कलंक से रहित चन्द्रमा के समान तथा देव दानवों से
जित वीर प्रभु हमारे लिए कल्याणकारी हों।

चतुर्विध संघ की स्तुति

ण-भवण गहण सुय-रयण,भरिय दसण विसुद्ध-रत्थागा।
ाघनगर ! भद्द ते, अखंड चारित्त-पागारा ।४।

हे संघ-नगर ! हे चतुर्विध संघ रूपी नगर ! तुम मे

क्षमा ब्रह्मचर्यादि गुण रूपी प्रासाद-महल पद पद पर खड़े हैं तुम आचारांग सूत्रकृतांग आदि श्रुत रत्नों से भरे हुए हो, तुम्हारे सम्यक्त्व रूपी मार्ग मिथ्यात्व रज रहित हैं तथा चारित्र रूप प्राकार-कोट अखण्ड-विराधना रहित हैं। हे संघनगर ! तुम्हारा कल्याण हो।

संजम-तव-तुंबारयस्स, नमो सम्मत्त पारियल्लस्स ।
अप्पडि-चक्कस्स जओ, होउ सया संघचक्कस्स ।५।

हे संघचक्र ! १७ प्रकार का संयम तुम्हारी नाभि-मध्य भाग है १२ प्रकार का तप तुम्हारे आरे-ऊपरी और मध्य भाग को जोड़नेवाले दण्ड है और शुद्ध सम्यक्त्व तुम्हारे पुट्ठे-ऊपरी भाग हैं। तुम अप्रतिचक्र हो अर्थात् तुम्हारा अलौकिक तेजस्विता के सम्मुख अन्य सभी प्रतिचक्र निस्तेज तथा शक्तिहीन बन जाते हैं। हे संघचक्र ! मैं तुम्हें नमस्कार करता हूँ। तुम्हारी सदा विजय हो।

भद्दं सील-पडागूसियस्स, तव नियम-तुरय-जुत्तस्स ।
संघरहस्स भगवओ, सज्झाय सुनंदि-घोसस्स ।६।

हे संघरथ ! तप नियम रूप जो वायु वेग अश्व तुम मे जुते हुए हैं। १८ हजार शीलांग रूपी ऊँची पताका तुम्हारे शिखर पर फहरा रही है जिनके दोनों चक्रों से पंच विध स्वाध्याय रूप मांगलिक ध्वनि निकल रही है तथा तुम परम ऐश्वर्य शाली हो, अर्थात् कोई भी विराधिन तो तुम्हारी समता

कर सकता है न तुम्हारी गति मे रुकावट ही डाल सकता है। हे भवरथ ! तुम्हारा कल्याण हो ।

कम्म रय-जलोह विणिग्गयस्स, सुय रयण दीहनालस्स।
पच महव्वय थिर कन्नियस्स, गुणकेसरालस्स ।७।
सावग-जण महुअरी परिवुडस्स, जिण सूर-तेय-बुद्धस्स ।
सघपउमस्स भद्द समण गण सहस्स पत्तस्स ।८।

हे सघ कमल ! कम कीचड मे भरे ससार सरोवर मे उत्पन्न होकर भी तुम उससे ऊँचे उठ हुए हो । श्रुतरत्न तुम्हारी दीर्घ नालिका और पच महाव्रत दृढ कर्णिका है । दश यति धर्मादि तुम्हारी पुष्प पराग और हजारो हजार मुनिराज तुम्हारे पत्ते हैं । तुम जिन सूय के देशना रूपी प्रकाश हुए हो तथा श्रावक भौरे तुम्हारे चारो ओर मडरा रहे हैं । हे सघ पद्म ! तुम्हारा कल्याण हो ।

तव-सजम मय लछण,अकिरिय-राहु-मुह - दुद्धरिस निच्च।
जय सघचद ! निम्मल-सम्मत्त विसुद्ध-जोण्हागा ! ।९।

हे सघ चन्द्रमा ! सयम तप तुम्हारा मगलाछन है तथा निमल सम्यक्त्व तुम्हारी दूध सी चांदनी है। नास्तिक-वादियो का अथवा शिथिलाचार का राहु तुम्हे त्रिकाल में भी ग्रस नही सकता । हे सघ चन्द्रमा ! तुम्हारी जय विजय हो ।

पर तित्थिय-गह-पह-नासगस्स, तव-तेय-दित्त-लेसस्स ।
नाणुज्जोयस्स जए, भद्द दमसघसूरस्स ।१०।

हे सघ सूय ! तपस्तेज तुम्हारा देदीप्यमान वर्ण है। सम्यगज्ञान तुम्हारा प्रकाश है। तुम अधकार का दमन (नाश) करने वाले हो एव परमत के सब ग्रहो की प्रभा को तुमने समाप्त कर दिया है। हे सघ सूर्य ! तुम्हारा कल्याण हो।

भद्द धिइ वेला परिगयस्स, सज्झाय जोग मगरस्स।
अक्खोहस्स भगवओ, सघसमुद्दस्स रुदस्स ।११।

हे सघ समुद्र ! धैर्य, सयम व तप के प्रति निरतर बढता हुआ उत्साह तुम्हारी लहर हैं। तुम मे अष्टकर्मों को ग्रस लेने वाले स्वाध्याय रूप बड़े २ मगर बसते हैं। तुम विशाल हो, ऐश्वर्यवत हो अर्थात रत्न राशि हो तथा परीषह उपसर्गों के प्रलयकर झझावात से भी क्षुब्ध न होने वाले हो। हे सघ समुद्र ! तुम्हारा कल्याण हो।

सम्म ह्सण वर वइर-दढ रुढ गाढावगाढ पेढस्स।
धम्म वर रयण-मडिय, चामीयर मेहलागस्स ।१२।
नियमूसिय-कणय, सिलायलुज्जल-जलत चित्त-कूडस्स।
नदण-वण मणहर-सुरभि-सील गधुद्धुमायस्स ।१३।

हे सघ महा मेरुगिरि ! श्रेष्ठ वज्र के समान, शका काक्षादि छिद्र रहित होने से दृढ चिरकाल से प्रशस्त अध्यवसाय और समय समय शुद्धि होने से दीर्घकाल का तत्त्वो के प्रति तीव्र अभिरुचि होने से घना तथा जीवादि पदार्थों की ठीक ठीक जानकारी होने से गहरा-ऐसा सम्यग्दर्शन तुम्हारी पीठिका है। उत्तरगुण रूप रत्नो से मडित तुम्हारी मूलगुण

नाण वर-रयण-दिप्पत, चत वेरुलिय विमल-वूलस्स ।
वदामि विणय-पणओ, सवमहामदरगिरिस्स ।१७।

विनय स भूर गुण उत्तम मुनिराज तुम्हारी घमचना विजलियाँ हैं। उनमे धिर आचाय तुम्हारे शिखर हैं। नाना गुणों के भडार निग्रथ रूप कल्पवृक्षा से तुम्हारा वन भरा है। व धम फला और ऋद्धि फूला स लद हुए हैं। उत्तम ज्ञान रूप रत्ना से देदीप्यमान तुम्हारा वडूर्यमय चूला बडी मनोहर और स्वच्छ है। हे सघ महामन्दर गिरि ! मैं आपको विनय से नम्र होकर वन्दन करता हूँ।

गुण रयणुज्जल-कडय, सील-सुगंधितव-मडिउद्देस ।
सुय-बारसग सिहर, सवमहामदर वदे ।१८।

हे सघ महामन्दर ! शील से सुगन्धित और तप से अलकृत तुम्हारी पार्श्वभूमि-इधर उधर का भागन है। प्रशस्त गुणरूप उज्ज्वल रत्नमय तुम्हारा कटिभाग-मध्य भाग है, तथा श्रुतद्वादशांग तुम्हारा उच्च शिखर है। हे सघ महामन्दर ! मैं आपको वन्दना करता हूँ।

नगर-रह-चक्क-पउमे, चदे सुरे समुद्द-मेरुम्मि ।
जो उवमिज्जइ सयय, त सघगुणायर वदे ।१९।

१ नगर, २ रथ, ३ चक्र ४ पद्म, ५ चन्द्र, ६ सूर्य, ७ समुद्र ८ मेरु इत्यादि उपमाओ से जिसका नित्य गुणगान किया जाता है, उस सघ महामन्दर को मैं वन्दना करता हूँ।

तीर्थंकर स्तुति

(वंदे)उसम अजिय समव,मभिनदण सुमइ-सुप्पम-सुपास।
ससि पुप्फदत सीयल,सिज्जस वासुपुज्ज च ।२०।
विमल-मणत य धम्म, सति कुथु अर च मल्लि च ।
मुनिसुच्चय नमि नेमि, पास तह वद्धमाण च ।२१।

१ ऋषभ, २ अजित, ३ सम्भव, ४ अभिनन्दन, ५ सुमति ६ सुप्रभ ७ सुपार्श्व, ८ शशि ९ पुष्पदन्त १० शीतल, ११ श्रेयांस १२ वासुपूज्य, १३ विमल १४ अनन्त, १५ धर्म, १६ शांति १७ कुथु, १८ अर, १९ मल्लि, २० मुनिसुव्रत २१ नमि, २२ नेमि २३ पार्श्व तथा २४ हे वद्धमान ! मैं आपको वन्दना करता हूँ।

गणधर देवों की स्तुति

पढमित्थ इदभूई, बीए पुण होई अग्गिभूइत्ति।
तइए य वाउभूई, तओ वियत्ते सुहम्मे य ।२२।
मडिय-मोरियपुत्ते, अकंपिए चेव अयलभाया य ।
मेयज्जे य पहासे (य)गणहरा हुति वीरस्स ।२३।

श्री वीर के १ इन्द्रभूति २ अग्निभूति, ३ वायुभूति, ४ व्यक्तभूति, ५ सुधर्मा, ६ मण्डितपुत्र, ७ मौर्यपुत्र, ८ अकपित, ९ अचलभ्राता, १० मेतार्य तथा ११ प्रभास
(इन्हें मैं वन्दना करता हू)।

नाण-वर-रयण-दिप्पत, फत-वेरुलिय-विमल-चूलस्स ।
वदामि विणय-पणओ, सघमहामदरगिरिस्स ।१७।

विनय से झुक हुए उत्तम मुनिराज तुम्हारी चमकती बिजलियाँ हैं। उनसे घिर आचार्य तुम्हारे शिखर हैं। नाना गुणो के भडार निग्रथ रूप कल्पवृक्षो से तुम्हारा वन भरा है। व धर्म फला और ऋद्धि फूलो से लदे हुए हैं। उत्तम ज्ञान रूप रत्नो से देदीप्यमान तुम्हारी वडूर्यमय चूला बडी मनोहर और स्वच्छ है। हे सघ महामन्दर गिरि ! मैं आपका विनय से नम्र होकर वदना करता हूँ।

गुण-रयणुज्जल-कडय, सील-सुगधित्तव-मडिउद्देस ।
सुय-बारसग-सिहर, सघमहामदर वदे ।१८।

हे सघ महामन्दर ! शील से सुगधित और तप से अलकृत तुम्हारी पादभूमि-इधर उधर का भाग है। प्रशस्त गुणरूप उज्ज्वल रत्नमय तुम्हारा कटिभाग-मध्य भाग है तथा श्रुतद्वादशाग तुम्हारा उच्च शिखर है। हे सघ महामन्दर ! मैं आपकी वन्दना करता हूँ।

नगर-रह-चक्क पउमे, चदे सूरे समुद्द-मेरुम्मि ।
जो उवमिज्जइ सयय, त सघगुणायर वदे ।१९।

१ नगर २ रथ, ३ चक्र ४ पद्म, ५ चन्द्र, ६ सूर्य, ७ समुद्र ८ मेरु इत्यादि उपमाओ से जिसका नित्य गुणगान किया जाता है, उस सघ महामन्दर को मैं वन्दना करता हूँ।

तीर्थंकर स्तुति

(वंदे)उसम अजिय सभव,मभिनदण-सुमइ-सुप्पभ-सुपास।
ससि पुप्फदत सोयल,सिज्जस वासुपुज्ज च ।२०।
विमल-मणत य धम्म, सति कुथु अर च मल्लि च।
मुनिसुव्वय नमि नेमि, पास तह वद्धमाण च ।२१।

१ ऋषभ, २ अजित, ३ सम्भव, ४ अभिनन्दन, ५ सुमति ६ सुप्रभ ७ सुपार्श्व, ८ शशि ९ पुष्पदन्त १० शीतल, ११ श्रेयांस १२ वासुपूज्य, १३ विमल, १४ अनन्त, १५ धर्म, १६ शान्ति १७ कुंथु, १८ अर, १९ मल्लि, २० मुनिसुव्रत, २१ नमि २२ नेमि २३ पार्श्व तथा २४ हे वद्धमान ! मैं आपको वन्दना करता हूँ।

गणधर देवों की स्तुति

पढमित्थ इदमूई, बीए पुण होई अग्गिभूइत्ति।
तइए य वाउभूई, तओ वियत्ते सुहम्मे य ।२२।
मंडिय-मोरियपुत्ते, अकंपिए चेव अयलभाया य ।
मेयज्जे य पहासे (य)गणहरा हुति वीरस्स ।२३।

श्री वीर के १ इन्द्रभूति, २ अग्निभूति, ३ वायुभूति, ४ व्यक्तभूति, ५ सुधर्मा, ६ मण्डितपुत्र, ७ मौर्यपुत्र, ८ अकंपित, ९ अचलभ्राता, १० मैतार्य तथा ११ प्रभास—ये एकादश गणधर हुए (इन्हें मैं वन्दना करता हूँ)।

वीर शासन की स्तुति

निव्वुइ-पह-सासणयं, जयइ सया सव्व-भाव-देसणयं।
कुसमय-मय-नासणयं, जिणिंद-वर-वीर-सासणयं।२४।

मोक्ष मार्ग दर्शानेवाला, सम्पूर्ण भावों-पदार्थों को बतलानेवाला, तथा कुशास्त्रों के दुरभिमान को गलानेवाला, जिनेन्द्रवर वीर का शासन सदा जयवन्त है।

युगप्रधान आचार्यों की स्तुति

सुहम्मं अग्गिवेसाणं, जंबूनामं च कासवं।
पभवं कच्चायणं वंदे, वच्छं सिज्जंभवं तहा।२५।

१ अग्निवश्यायनगोत्री श्रीसुधर्मा २ काश्यपगोत्री श्रीजम्बू ३ कात्यायनगोत्री श्रीप्रभव तथा ४ वत्सगोत्री श्रीशय्यंभव को मैं वन्दना करता हूँ।

जसभद्दं तुंगियं वंदे, संभूयं चेव माढरं।
भद्दबाहुं च पाइन्नं, थूलभद्दं च गोयमं।२६।

५ तुंगिक-व्याघ्रापत्यगोत्री श्रीयशोभद्र, ६ माढरगोत्री श्रीसंभूतिविजय, ७ प्राचीनगोत्री श्रीभद्रबाहु तथा ८ गौतमगोत्री श्री स्थूलिभद्र को मैं वन्दना करता हूँ।

एलावच्चसगोत्तं, वंदामि महागिरिं सुहत्थिं च।
तत्तो कोसियगोत्तं, बहुलस्स सरिव्वयं वंदे।२७।

९ एलापत्यगोत्री महागिरि, १० वशिष्ठगोत्री सुहस्ति

तथा ११ कौशिकगोत्री बहुल के समवयस्क—भाई के समान बलिस्स को मैं वन्दना करता हूं।

हारियगुत्त साइ च, वदिमो हारिय च सामज्ज।
वंदे कोसियगोत्त संडिल्लं अज्जजीयधरं।२८।

१२ हारितगोत्री स्वाति, १३ हारितगोत्री श्याम तथा १४ जीत आचार का कथन करने वाले ग्रन्थों के ज्ञाता कौशिकगोत्री आर्य श्री शाण्डिल्य को मैं वन्दना करता हूँ।

ति-समुद्द-खाय कित्ति, दीव-समुद्देसु गहिय-पेयालं।
वंदे अज्जसमुद्द, अक्खुभिय-समुद्द-गंभीरं।२९।

तीन समुद्रों में ख्याति प्राप्त अर्थात्—पूर्व पश्चिम, दक्षिण इन तीनों ओर से घिरे हुए भरत-क्षेत्र में प्रसिद्ध, द्वीप-सागरप्रज्ञप्ति के तलस्पर्शी ज्ञाता तथा समुद्र के समान शांत व गम्भीर १५ श्री आर्य समुद्र को मैं वन्दना करता हूँ।

भणगं करगं झरगं, पभावगं णाण-दंसण-गुणाणं।
वंदामि अज्जमंगु सुय-सागर-पारगं धीरं।३०।

वाणी से शास्त्रोक्त तत्त्वों का प्रतिपादन करने वाले, शरीर से तदनुसार आचरण करने वाले तथा हृदय से उन्हीं का चिंतन करने वाले, इस प्रकार अपने सम्पूर्ण जीवन से ज्ञान दर्शनादि की प्रभावना करने वाले, श्रुतसमुद्र के पारगामी धीर १६ श्री आर्यमंगु को मैं वन्दना करता हूँ।

वंदामि अज्जधम्म, तत्तो वन्दे य भद्दगुत्त च ।
तत्तो य अज्जवइर तव नियम-गुणेहि वइरसम ।३१।

१७ श्री आयधम १८ आयभद्रगुप्त, १९ तथा तप नियमादि गुणा म वज्र के समान दृढ़ श्रीआय वज्र को मैं वदना करता हूँ ।

वंदामि अज्जरक्खिय-खमणे, रक्खिय चरित्त सव्वस्से ।
रयण-करडग भूओ,अणुओगो रक्खिओ जेहिं ।३२।

२० अपने समय क सभी मुनिराजा के सयमी जीवन की रक्षा करने वाले तथा रत्न करण्ड के समान अनुयोग को टिकाने वाले तपोमूर्ति आय रक्षित को मैं वदना करता हूँ ।

णाणम्मि दसणम्मि य, तवविणए णिच्च-काल-मुज्जुत्त ।
अज्ज नंदिलखमण, सिरसा वंदे पसन्नमण ।३३।

२१ ज्ञान, दर्शन चारित्र तप और विनय की सदा अप्रमत्त साधना करने वाले, प्रसन्न मन अर्थात् राग द्वेष रहित अन्त करण वाले आय नंदिल क्षमण को मैं सिरसा वदन करता हूँ ।

वड्ढउ वायगवसो, जसवसो [illegible]
वागरण-करण-भगिय, क[illegible] ।३४।

२[illegible] करण
[illegible]
यथा[illegible]

अच्चजण-धाउ-सम-प्पहाण, मुद्दिय-कुवलय-निहाण ।
वड्ढउ वायगवसो, रेवइनक्खत्तनामाण ।३५।

२३ जातिवान् अजन धातु के समान कुछ काले तथा पकी दाख और नीले कमल के समान अथवा नीलमणि के समान कुछ लाल अर्थात् श्याम वर्ण वाले रेवति नक्षत्र के वाचक वंश का मैं बधाई देता हूँ—यह वाचक वंश वृद्धि प्राप्त करे।

अयलपुरा णिक्खते, कालिय-सुय-आणुओगिए धीरे ।
बम्हद्दीवग-सीहे, वायग-पय मुत्तम पत्ते ।३६।

२४ अचलपुर से निकले हुए—दीक्षित कालिक सूत्रों के व्याख्याता, उत्तम वाचक पद को प्राप्त, ब्रह्मदीपक शाखा में सिंह के समान तेजस्वी, धीर श्रीसिंह को मैं वन्दना करता हूँ।

जेसि इमो अणुओगो, पयरइ अज्जावि अड्ढ-भरहम्मि ।
बहु-नयर निग्गय-जसे, ते वदे खदिलायरिए ।३७।

२५ आज भी अर्द्ध भरत जिनकी यह वाचना स्वीकार कर रहा है, तथा जिनकी यश ख्याति नगर-नगर में फैल चुकी है उन स्कन्दिलाचार्य को मैं वन्दना करता हूँ।

तत्तो हिमवतमहत, विक्कमे धिइ-परक्कम मणते ।
सज्झाय मणत धरे, हिमवते वदिमो सिरसा ।३८।

कालिय सुय-अणुओगस्स, धारए धारए य पुव्वाण ।
हिमवत खमासमणे, वदे णागज्जुणायरियें ।३९।

२६ हिमालय क्षत्र के तुल्य, विस्तृत क्षेत्र मे व्यापक विहार कर जिन शासन की प्रभावना करने वाले, अखूट धय, नि सीम पराक्रम और भाव की अपक्षा अन त स्वाध्याय के स्वामी, कालिक श्रुत सम्बधी अनुयाग और पूर्वों के धारक श्री हिमवान क्षमाश्रमण का तथा २७ नागार्जुनाचाय को मैं सिरसा वदन करता हू ।

मिउ-मद्दव-सपन्ने, आणुपुव्वि-वायगत्तण पत्ते ।
ओह सुय समायारे, नागज्जुणवायए वन्दे ।४०।

जगत प्रिय कामलता स सम्पन्न, वय एव पर्याय वद्ध हाने पर वाचक पद को प्राप्त तथा उत्सग विधि के पालक श्री नागार्जुन वाचक का मैं व दना करता हूँ ।

गोविंदाण पि नमो, अणुओगे विउलधारिणिंदाण ।
णिच्च खतिदयाण, परूवणे दुल्लभिंदाण ।४१।

२८ अनुयाग सम्ब धी विपुल धारणाए रखने वाला म तथा नित्य क्षमा दया की प्ररूपणा करने वालो मे, दाना म इ द्र क समान श्रेष्ठ गाविन्द को मैं नमस्कार करता हूँ ।

तत्तो य भूयदिन्न, निच्च तवसजमे अनिव्विण्णं ।
पडिय जण सामण्ण, वदामो सजम-विहिण्णु ।४२।
वर-कणग-तविय चपग,विमउल-वर-कमल गब्भ-सरिवन्ने ।
भविय जण-हियय-दइए, दया-गुण विसारए धीरे ।४३।

२६ तप सयम की सतत, अखड साधना करने वाले, सयम विधि के जानकार, पण्डितजनों मे आदरणीय तपाये

हुए उत्तम सोने पीले चम्पक व खिले हुए उत्तम कमल गर्भ के समान देह कांति वाले, भव्यजनों के हृदय वल्लभ, दयाभाव जगाने अथवा दया प्रवचन में पटु, धीर श्रीभूतदिन्न को मैं वन्दना करता हूँ।

अड्ढ भरह-प्पहाणे, बहुविह-सज्झाय-सुमुणियपहाणे।
अणुओगिय-वर-वसमे, नाइल कुल-वंस-नंदीकरे।४४।

भूय हियअप्पगब्मे, वन्देऽहं भूयदिन्नमायरिए।
भव भय बुच्छेय-करे, सीसे नागज्जुणरिसीण।४५।

अर्ध भरत में युग प्रधान, बहु विध स्वाध्याय के विज्ञाता, योग्य शिष्यों को उपयुक्त स्थल पर नियुक्त करने वाले, नागेन्द्र कुल परंपरा के नंदन प्राणी रक्षा के महान उपदेष्टा भव भय के उच्छेदक, नागार्जुन ऋषि के शिष्य श्री भूतदिन्न को मैं वन्दना करता हूँ।

सुमुणिय निच्चानिच्च, सुमुणिय सुत्तत्थ धारय वन्दे।
सब्भावुब्भावणया,-तत्थ लोहिच्चणामाणं।४६।

३० द्रव्यों की नित्यानित्यता विषयक परम पंडित अर्थात् न्याय शास्त्र के प्रकाण्ड विद्वान, सूत्रार्थ को सदैव अभ्यस्त करके रखने वाले तथा जिन कथित भावों की सम्यक् प्ररूपणा करने वाले-अविसंवादी श्रीलोहित्य को मैं वन्दना करता हूँ।

अत्थ महत्थ क्खाणिं, सुसमण वक्खाण कहण निव्वाणिं।
पयईए महुरवाणिं, पयओ पणमामि दूसगणिं।४७।

३१ शास्त्रों के सामान्य व गूढ़ ग्रंथ के ध्यान समान, योग्य शिष्यों को ज्ञान देते हुए आनन्द का अनुभव करने वाले, स्वभाव से ही मधुर भाषी श्री दूष्यगणी को मैं प्रयत्न पूर्वक नमस्कार करता हूँ।

तव नियम-सच्च-संजम,-विणयज्जव खंति मद्दव-रयाणं ।
सील गुण-गद्दियाणं, अणुओग-जुग-प्पहाणाणं ।४८।
सुकुमाल कोमल-तले, तेसिं पणमामि लक्खणपसत्थे ।
पाए पावयणीणं, पडिच्छय सयएहिं पणिवइए ।४६।

तप, नियम, सत्य, संयम, विनय, आर्जव क्षमा, मृदुता आदि यति धर्मों में लीन शील गुणों से विख्यात अनुयोग की वाचना में युग प्रधान, जिनके हाथ व पैर के तलुवे सुकोमल और शंख, चक्रादि प्रशस्त लक्षण युक्त हैं एवं जिन्हें सैकड़ों प्रातीच्छक मुनिराज नमस्कार करते हैं उन (दूष्यगणि) परों में मैं पड़ता हूँ।

जे अन्ने भगवंते, कालिय-सुय आणुओगिए धीरे ।
ते पणमिऊण सिरसा, "नाणस्स परूवणं" वोच्छं ।

इन युग प्रधान आचार्यों के अतिरिक्त जो अन्य श्रुत सम्बन्धी अनुयोगधारी धीर भगवन्त हैं ५६ प्रणाम करके (३२ मे देव वाचक–देवर्द्धिगणि) ने ज्ञान की जो प्ररूपणा की है, उसे कहूंगा।

॥ इति ॥

भक्तामर स्तोत्रम्

भक्तामरप्रणतमौलिमणिप्रभाणा-मुद्योतकं दलितपापतमोवितानम् ।
सम्यक् प्रणम्य जिनपादयुगं युगादा-वालम्बनं भवजले पततां जनानाम् ।१।
यः संस्तुतः सकलवाङ्मयतत्त्वबोधा-दुद्भूतबुद्धिपटुभिः सुरलोकनाथैः ।
स्तोत्रैर्जगत्त्रितयचित्तहरैरुदारैः, स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम् ।२।
बुद्ध्या विनापि विबुधार्चितपादपीठ, स्तोतुं समुद्यतमतिर्विगतत्रपोऽहम् ।
बालं विहाय जलसंस्थितमिन्दुबिम्ब-मन्यः क इच्छति जनः सहसा ग्रहीतुम् ।३।
वक्तुं गुणान् गुणसमुद्र ! शशाङ्ककान्तान् कस्ते क्षमः सुरगुरुप्रतिमोऽपि बुद्ध्या ।
कल्पान्तकालपवनोद्धतनक्रचक्रं, को वा तरीतुमलमम्बुनिधिं भुजाभ्याम् ।४।
सोऽहं तथापि तव भक्तिवशान्मुनीश कर्तुं स्तवं विगतशक्तिरपि प्रवृत्तः ।
प्रीत्यात्मवीर्यमविचार्य मृगो मृगेन्द्रं नाभ्येति किं निजशिशोः परिपालनार्थम् ।५।
अल्पश्रुतं श्रुतवतां परिहासधाम त्वद्भक्तिरेव मुखरीकुरुते बलान्माम् ।
यत्कोकिलः किल मधौ मधुरं विरौति तच्चाम्रचारुकलिकानिकरैकहेतु ।६।
त्वत्संस्तवेन भवसन्ततिसन्निबद्धं, पापं क्षणात् क्षयमुपैति शरीरभाजाम् ।
आक्रान्तलोकमलिनीलमशेषमाशु, सूर्यांशुभिन्नमिव शार्वरमन्धकारम् ।७।
मत्वेति नाथ तव संस्तवनं मयेद-मारभ्यते तनुधियापि तव प्रभावात् ।
चेतो हरिष्यति सतां नलिनीदलेषु, मुक्ताफलद्युतिमुपैति ननूदबिन्दुः ।८।
आस्तां तव स्तवनमस्तसमस्तदोषं त्वत्संकथापि जगतां दुरितानि हन्ति ।
दूरे सहस्रकिरणः कुरुते प्रभैव, पद्माकरेषु जलजानि विकासभाञ्जि ।९।
नात्यद्भुतं भुवनभूषण भूतनाथ !, भूतैर्गुणैर्भुवि भवन्तमभिष्टुवन्तः ।
तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा भूत्याश्रितं य इह नात्मसमं करोति ॥
दृष्ट्वा भवन्तमनिमेषविलोकनीयं नान्यत्र तोषमुपयाति जनस्य चक्षुः ।
पीत्वा पयः शशिकरद्युतिदुग्धसिन्धोः, क्षारं जलं जलनिधे रसितुं क इच्छेत् ।११।
यैः शान्तरागरुचिभिः परमाणुभिस्त्वं, निर्मापितस्त्रिभुवनैकललामभूत ।
तावन्त एव खलु तेऽप्यणवः पृथिव्यां, यत्ते समानमपरं नहि रूपमस्ति ।१२।

वक्त्रं क्व ते सुरनरोरगनेत्रहारि, निःशेषनिर्जितजगत्त्रितयोपमानम् ।
बिम्बं कलङ्कमलिनं क्व निशाकरस्य यद्वासरे भवति पाण्डुपलाशकल्पम् ।१३।
सम्पूर्णमण्डलशशाङ्ककलाकलाप ! शुभ्रा गुणास्त्रिभुवनं तव लंघयन्ति ।
ये संश्रितास्त्रिजगदीश्वरनाथमेकं, कस्तान्निवारयति संचरतो यथेष्टम् ।१४।
चित्रं किमत्र यदि ते त्रिदशांगनाभि-र्नीतं मनागपि मनो न विकारमार्गम् ।
कल्पान्तकालमरुता चलिताचलेन किं मन्दराद्रिशिखरं चलितं कदाचित् ।१५।
निर्धूमवर्तिरपवर्जिततैलपूरः कृत्स्नं जगत्त्रयमिदं प्रकटीकरोषि ।
गम्यो न जातु मरुतां चलिताचलानां, दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ ! जगत्प्रकाशः ।१६।
नास्तं कदाचिदुपयासि न राहुगम्यः स्पष्टीकरोषि सहसा युगपज्जगन्ति ।
नाम्भोधरोदरनिरुद्धमहाप्रभावः सूर्यातिशायिमहिमासि मुनीन्द्र लोके ।१७।
नित्योदयं दलितमोहमहान्धकारं गम्यं न राहुवदनस्य न वारिदानाम् ।
विभ्राजते तव मुखाब्जमनल्पकान्ति विद्योतयज्जगदपूर्वशशाङ्कबिम्बम् ।१८।
किं शर्वरीषु शशिनाह्नि विवस्वता वा, युष्मन्मुखेन्दुदलितेषु तमःसु नाथ ।
निष्पन्नशालिवनशालिनि जीवलोके कार्यं कियज्जलधरैर्जलभारनम्रैः ।१९।
ज्ञानं यथा त्वयि विभाति कृतावकाशं नैवं तथा हरिहरादिषु नायकेषु ।
तेजः स्फुरन्मणिषु याति यथा महत्त्वं नैवं तु काचशकले किरणाकुलेऽपि ।२०।
मन्ये वरं हरिहरादय एव दृष्टा दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोषमेति ।
किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः कश्चिन्मनो हरति नाथ भवान्तरेऽपि ।२१।
स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान् नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता ।
सर्वा दिशो दधति भानि सहस्ररश्मिं प्राच्येव दिग्जनयति स्फुरदंशुजालम् ।२२।
त्वामामनन्ति मुनयः परमं पुमांस-मादित्यवर्णममलं तमसः पुरस्तात् ।
त्वामेव सम्यगुपलभ्य जयन्ति मृत्युं नान्यः शिवः शिवपदस्य मुनीन्द्र ! पन्थाः ।२३।
त्वामव्ययं विभुमचिन्त्यमसंख्यमाद्यं ब्रह्माणमीश्वरमनन्तमनङ्गकेतुम् ।
योगीश्वरं विदितयोगमनेकमेकं ज्ञानस्वरूपममलं प्रवदन्ति सन्तः ।२४।
बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चितबुद्धिबोधात् त्वं शंकरोऽसि भुवनत्रयशंकरत्वात् ।
धातासि धीर ! शिवमार्गविधेर्विधानात् व्यक्तं त्वमेव भगवन् पुरुषोत्तमोऽसि ।।

भिन्नेभकुम्भगलदुज्ज्वलशोणिताक्त-मुक्ताफलप्रकरभूषितभूमिभागः ।
बद्धक्रमः क्रमगतं हरिणाधिपोऽपि, नाक्रामति क्रमयुगाचलसंश्रितं ते ।३९।
कल्पान्तकालपवनोद्धतवह्निकल्पं, दावानलं ज्वलितमुज्ज्वलमुत्स्फुलिङ्गम् ।
विश्वं जिघत्सुमिव सम्मुखमापतन्तं त्वन्नामकीर्तनजलं शमयत्यशेषम् ।४०।
रक्तेक्षणं समदकोकिलकण्ठनीलं क्रोधोद्धतं फणिनमुत्फणमापतन्तम् ।
आक्रामति क्रमयुगेन निरस्तशङ्क-स्त्वन्नामनागदमनी हृदि यस्य पुंसः ।४१।
वल्गत्तुरङ्गगजगर्जितभीमनाद-माजौ बलं बलवतामपि भूपतीनाम् ।
उद्यद्दिवाकरमयूखशिखापविद्धं, त्वत्कीर्तनात्तम इवाशु भिदामुपैति ।४२।
कुन्ताग्रभिन्नगजशोणितवारिवाह-वेगावतारतरणातुरयोधभीमे ।
युद्धे जयं विजितदुर्जयजेयपक्षा-स्त्वत्पादपङ्कजवनाश्रयिणो लभन्ते ।४३।
अम्भोनिधौ क्षुभितभीषणनक्रचक्रपाठीनपीठभयदोल्बणवाडवाग्नौ ।
रङ्गत्तरङ्गशिखरस्थितयानपात्रा-स्त्रासं विहाय भवतः स्मरणाद्व्रजन्ति ।४४।
उद्भूतभीषणजलोदरभारभुग्नाः, शोच्यां दशामुपगताश्च्युतजीविताशाः ।
त्वत्पादपंकजरजोऽमृतदिग्धदेहा, मर्त्या भवन्ति मकरध्वजतुल्यरूपाः ।४५।
आपादकण्ठमुरुशृङ्खलवेष्टिताङ्गा, गाढं बृहन्निगडकोटिनिघृष्टजङ्घाः ।
त्वन्नाममन्त्रमनिशं मनुजाः स्मरन्तः सद्यः स्वयं विगतबन्धभया भवन्ति ।४६।
मत्तद्विपेन्द्रमृगराजदवानलाहि-संग्रामवारिधिमहोदरबन्धनोत्थम् ।
तस्याशु नाशमुपयाति भयं भियेव यस्तावकं स्तवमिमं मतिमानधीते ।४७।
स्तोत्रस्रजं तव जिनेन्द्र ! गुणैर्निबद्धां भक्त्या मयारुचिरवर्णविचित्रपुष्पाम् ।
धत्ते जनो य इह कण्ठगतामजस्रं तं मानतुङ्गमवशा समुपैति लक्ष्मीः ।४८।

卐 श्री कल्याणमन्दिर स्तोत्रम् 卐

कल्याणमन्दिरमुदारमवद्यभेदि,
भीताभयप्रदमनिन्दितमङ्घ्रिपद्मम् ॥
संसारसागरनिमज्जदशेषजन्तु–
पोतायमानमभिनम्य जिनेश्वरस्य ।१।
यस्य स्वयं सुरगुरुर्गरिमाम्बुराशेः,
स्तोत्रं सुविस्तृतमतिर्न विभुर्विधातुम् ॥
तीर्थेश्वरस्य कमठस्मयधूमकेतो–
स्तस्याहमेष किल संस्तवनं करिष्ये ।२। ॥युग्मम्॥
सामान्यतोऽपि तव वर्णयितुं स्वरूप–
मस्मादृशाः कथमधीश ! भवन्त्यधीशाः ॥
धृष्टोऽपि कौशिकशिशुर्यदि वा दिवान्धो,
रूपं प्ररूपयति किं किल घर्मरश्मेः ? ।३।
मोहक्षयादनुभवन्नपि नाथ ! मर्त्यो,
नूनं गुणान् गणयितुं न तव क्षमेत ॥
कल्पान्तवान्तपयसः प्रकटोऽपि यस्मा–
न्मीयेत केन जलधेर्ननु रत्नराशिः ।४।
अभ्युद्यतोऽस्मि तव नाथ ! जडाशयोऽपि,
कर्तुं स्तवं लसदसंख्यगुणाकरस्य ॥
बालोऽपि किं न निजबाहुयुगं वितत्य,
विस्तीर्णतां कथयति स्वधियाम्बुराशेः ।५।

卐 श्री कल्याणमन्दिर स्तोत्रम् 卐

कल्याणमन्दिरमुदारमवद्यभेदि,
भीताभयप्रदमनिन्दितमङ्घ्रिपद्मम् ॥
संसारसागरनिमज्जदशेषजन्तु–
पोतायमानमभिनम्य जिनेश्वरस्य ।१।
यस्य स्वयं सुरगुरुर्गरिमाम्बुराशेः,
स्तोत्रं सुविस्तृतमतिर्न विभुर्विधातुम् ॥
तीर्थेश्वरस्य कमठस्मयधूमकेतो–
स्तस्याहमेष किल संस्तवनं करिष्ये ।२। ॥युग्मम॥
सामान्यतोऽपि तव वर्णयितुं स्वरूप–
मस्मादृशाः कथमधीश ! भवन्त्यधीशाः ॥
धृष्टोऽपि कौशिकशिशुर्यदि वा दिवान्धो,
रूपं प्ररूपयति किं किल घर्मरश्मेः ? ।३।
मोहक्षयादनुभवन्नपि नाथ ! मर्त्यो,
नूनं गुणान् गणयितुं न तव क्षमेत ॥
कल्पान्तवान्तपयसः प्रकटोऽपि यस्मा–
न्मीयेत केन जलधेर्ननु रत्नराशिः ।४।
अभ्युद्यतोऽस्मि तव नाथ ! जडाशयोऽपि,
कर्तुं स्तवं लसदसंख्यगुणाकरस्य ॥
बालोऽपि किं न निजबाहुयुगं वितत्य,
विस्तीर्णतां कथयति स्वधियाम्बुराशेः ।५।

ये योगीनामपि न यान्ति गुणास्तवेश !,
वक्तुं कथं भवति तेषु ममावकाशः ? ॥
जाता तदेवमसमीक्षित कारितेयं,
जल्पन्ति वा निजगिरा ननु पक्षिणोऽपि ।६।
आस्तामचिन्त्यमहिमा ! सस्तवस्ते,
नामापि पाति भवतो भवतो जगन्ति ।
तीव्रातपोपहत पान्थ जनान्निदाघे,
प्रीणाति पद्मसरसः सरसोऽनिलोऽपि ।७।
हृद्वर्त्तिनि त्वयि विभो ! शिथिली भवन्ति,
जन्तोः क्षणेन निबिडा अपि कर्मबन्धा ॥
सद्यो भुजङ्गममया इव मध्यभाग-
मभ्यागते वनशिखण्डिनि चन्दनस्य ।८।
मुच्यन्त एव मनुजाः सहसा जिनेन्द्र !
रौद्ररुपद्रवशतैस्त्वयि वीक्षितेऽपि ॥
गोस्वामिनि स्फुरिततेजसि दृष्टमात्रे,
चौरैरिवाशु पशवः प्रपलायमानैः ।९।
त्वं तारको जिन ! कथं ? भविना त एव,
त्वामुद्वहन्ति हृदयेन यदुत्तरन्तः ॥
यद्वा दृतिस्तरति यज्जलमेष नून-
मन्तर्गतस्य मरुतः स किलानुभावः ।१०।

यस्मिन् हरप्रभृतयोऽपि हतप्रभावा,
सोऽपि त्वया रतिपतिः क्षपितः क्षणेन ॥
विध्यापिता हुतभुजः पयसाथ येन,
पीतं न किं तदपि दुर्द्धर वाडवेन ? ११।
स्वामिन्ननल्पगरिमाणमपि प्रपन्ना–
स्त्वां जन्तवः कथमहो हृदये दधाना ? ॥
जन्मोदधिं लघु तरन्त्यति लाघवेन,
चिन्त्यो न हन्त महतां यदि वा प्रभावः ।१२।
क्रोधस्त्वया यदि विभो ! प्रथमं निरस्तो,
ध्वस्तास्तदा वद कथं किल कर्मचौरा ? ॥
प्लोषत्यमुत्र यदि वा शिशिरापि लोके,
नीलद्रुमाणि विपिनानि न किं हिमानी ।१३।
त्वां योगिनो जिन ! सदा परमात्मरूप–
मन्वेषयन्ति हृदयाम्बुजकोशदेशे ॥
पूतस्य निर्मलरुचेर्यदि वा किमन्य–
दक्षस्य सम्भवि पदं ननु कर्णिकायाः ।१४।
ध्यानाज्जिनेश ! भवतो भविनः क्षणेन,
देहं विहाय परमात्मदशां व्रजन्ति ॥
तीव्रानलादुपलभावमपास्य लोके,
चामीकरत्वमचिरादिव धातुभेदाः ।१५।

अ त सदव जिन ! यस्य विभाव्यसे त्वं,
भव्य कथं तदपि नाशयसे शरीरम ? ॥
एतत्स्वरूपमथ मध्यविवर्त्तिनो हि,
यद्विग्रह प्रशमयन्ति महानुभावा ।१६।
आत्मा मनीषिभिरय त्वदभेदबुद्ध्या,
ध्यातो जिनेन्द्र ! भवतीह भवत्प्रभाव ॥
पानीयमप्यमृतमित्यनुचिन्त्यमान,
किं नाम नो विषविकारमपाकरोति ।१७।
त्वामेव वीततमस परवादिनोऽपि,
नून विभो ! हरिहरादिधिया प्रपन्ना ॥
कि काचकामलिभिरीश ! सितोऽपि शङ्खो,
नो गृह्यते विविधवर्णविपर्ययेण ।१८।
धर्मोपदेशसमये सविधानुभावा-
दास्ता जनो भवति ते तरुरप्यशोक ॥
अभ्युद्गते दिनपतौ समहीरुहोऽपि,
किंवा विबोधमुपयाति न जीवलोक ? ।१९।
चित्र विभो ! कथमवाङ्मुखवृन्तमेव,
विष्वक पतत्यविरला सुरपुष्पवृष्टि ? ॥
त्वद्गोचरे सुमनसा यदि वा मुनीश !,
गच्छन्ति नूनमधएव हि बन्धनानि ।२०।

स्थाने गभीरहृदयोदधिसम्भवायाः,
पीयूषतां तव गिरः समुदीरयन्ति ॥
पीत्वा यतः परमसम्मदसङ्गभाजो,
भव्या व्रजन्ति तरसाऽप्यजरामरत्वम् ।२१।
स्वामिन् ! सुदूरमवनम्य समुत्पतन्तो,
मन्ये वदन्ति शुचयः सुरचामरौघाः ॥
येऽस्मै नतिं विदधते मुनिपुङ्गवाय,
ते नूनमूर्ध्वगतयः खलु शुद्धभावाः ।२२।
श्यामं गभीरगिरमुज्ज्वलहेमरत्न-
सिंहासनस्थमिह भव्यशिखण्डिनस्त्वाम् ॥
आलोकयन्ति रभसेन नदन्तमुच्चै-
श्चामीकराद्रिशिरसीव नवाम्बुवाहम् ।२३।
उद्गच्छता तव शितिद्युतिमण्डलेन,
लुप्तच्छदच्छविरशोकतरुर्बभूव ॥
सान्निध्यतोऽपि यदि वा तव वीतराग !,
नीरागतां व्रजति को न स चेतनोऽपि ।२४।
भो भो ! प्रमादमवधूय भजध्वमेन-
मागत्य निर्वृतिपुरिं प्रति सार्थवाहम् ॥
एतन्निवेदयति देव ! जगत्त्रयाय,
मन्ये नदन्नभिनभः सुरदुन्दुभिस्ते ।२५।

उद्योतितेषु भवता भुवनेषु नाथ !
ताराचितो विधुरयं विहताधिकार ॥
मुक्ताकलापकलितोच्छ्वसितातपत्र-
व्याजात्त्रिधा धृततनुर्ध्रुवमभ्युपेत ।२६।
स्वेनप्रपूरितजगत्त्रयपिण्डितेन,
कान्तिप्रतापयशसामिवसञ्चयेन ।
माणिक्यहेमरजतप्रविनिर्मितेन,
सालत्रयेण भगवन्नभितो विभासि ।२७।
दिव्यस्रजो जिन ! नमत्त्रिदशाधिपाना-
मुत्सृज्य रत्नरचितानपि मौलिबन्धान् ॥
पादौ श्रयन्ति भवतो यदि वा परत्र,
त्वत्सङ्गमे सुमनसो न रमन्त एव ।२८।
त्वंनाथ ! जन्मजलधेर्विपराङ्मुखोऽपि,
यत्तारयस्य सुमतो निजपृष्ठलग्नान् ॥
युक्तं हि पार्थिव निपस्य सतस्तवैव,
चित्रं विभो ! यदसि कर्मविपाकशून्य ।२९।
विश्वेश्वरोऽपि जनपालक ! दुर्गतस्त्वं,
किंवाऽक्षरप्रकृतिरप्यलिपिस्त्वमीश ! ॥
अज्ञानवत्यपि सदैव कथंचिदेव,
ज्ञानं त्वयि स्फुरति विश्वविकाशहेतु ।३०।

प्राग्भारसंभृतनभांसि रजांसि रोषा-
दुत्थापितानि कमठेन शठेन यानि ॥
छायाऽपि तैस्तवन नाथ ! हताहताशो,
ग्रस्तस्त्वमीभिरयमेव परं दुरात्मा ।३१।
यद् गर्जदूर्जितघनौघमदभ्रभीम,
भ्रश्यत्तडिन्मुसलमांसल घोरधारम् ॥
दैत्येन मुक्तमथ दुस्तरवारि दध्रे,
तेनैव तस्य जिन ! दुस्तरवारिकृत्यम ।३२।
ध्वस्तोर्ध्वकेशविकृताकृतिमर्त्यमुण्ड,
प्रालम्बभृद्भयदवक्त्र विनिर्यदग्नि ॥
प्रेतव्रज प्रतिभवन्तमपीरितो य
सोऽस्या भवत्प्रतिभव भवदुःखहेतु ।३३।
धन्यास्त एव भुवनाधिप ! ये त्रिसन्ध्य-
माराधयन्ति विधिवद्विधुतान्यकृत्या
भक्त्योल्लसत्पुलकपक्ष्मलदेहदेशा
पादद्वय तव विभो ! भुवि जन्मभाज ।३४।
अस्मिन्नपारभववारिनिधौ मुनीश !
मन्ये न मे श्रवणगोचरता गतोऽसि ॥
आकर्णिते तु तव गोत्रपवित्रमन्त्रे,
किं वा विपद्विषधरी सविध समेति ।३५

जन्मान्तरेऽपि तव पादयुगं न देव !,
मन्ये मया महितमीहितदानदक्षम् ॥
तेनेह जन्मनि मुनीश ! पराभवानां,
जातो निकेतनमहं मथिताशयानाम् ।३६।
नूनं न मोहतिमिरावृतलोचनेन,
पूर्वं विभो ! सकृदपि प्रविलोकितोऽसि ॥
मर्माविधो विधुरयन्ति हि मामनर्थाः,
प्रोद्यत्प्रबन्धगतयः कथमन्यथैते ।३७।
आकर्णितोऽपि महितोऽपि निरीक्षितोऽपि,
नूनं न चेतसि मया विधृतोऽसि भक्त्या ॥
जातोऽस्मि तेन जनबान्धव ! दुःखपात्रं,
यस्मात्क्रियाः प्रतिफलन्ति न भावशून्याः ।३८।
त्वं नाथ ! दुःखिजनवत्सल ! हे शरण्य !
कारुण्यपुण्यवसते वशिनां वरेण्य ! ॥
भक्त्या नते मयि महेश ! दयां विधाय,
दुःखाङ्कुरोद्दलनतत्परतां विधेहि ।३९।
निःसंख्यसारशरणं शरणं शरण्य-
मासाद्य सादितरिपुप्रथितावदातम् ॥
त्वत्पादपङ्कजमपि प्रणिधानवन्ध्यो,
वध्योऽस्मि चेद् भुवनपावन ! हा हतोऽस्मि ।४०।

देवेन्द्रवन्द्य ! विदिताखिलवस्तुसार !,
ससारतारक ! विभो ! भुवनाधिनाथ ! ॥
त्रायस्व देव ! करुणाहृद ! मा पुनीहि,
सीदन्तमद्य भयदव्यसनाम्बुराशे ।४१।
यद्यस्ति नाथ ! भवदङ्घ्रि सरोरुहाणा,
भक्ते फल किमपि सन्तति सचिताया
तन्मेत्वदेक शरणस्य शरण्यभूया,
स्वामि त्वमेव भुवनेऽत्र भवान्तरेऽपि ।४२।
इत्थ समाहितधियो विधिवज्जिनेन्द्र !
सान्द्रोल्लसत्पुलककञ्चुकिताङ्गभागा ॥
त्वद बिम्बनिर्मलमुखाम्बुजबद्धलक्षा,
ये सस्तव तव विभो ! रचयन्ति भव्या ।४३।
जननयन कुमुदचन्द्र !
प्रभास्वरा स्वर्गसपदो भुक्त्वा ॥
ते विगलितमलनिचया,
अचिरान्मोक्ष प्रपद्यन्ते ॥ युग्मम् ।४४।

– श्री रत्नाकर पच्चीसी –

श्रेय श्रिया मगलकेलिसद्म !, नरेंद्रदेवेन्द्रनताङ्घ्रिपद्म ! ।
सर्वज्ञ ! सर्वातिशयप्रधान !, चिरञ्जय ज्ञानकलानिधान ! ।१।

जगत्त्रयाधार ! कृपावतार !, दुर्वारससारविकारवद्य ! ।
श्रीवीतराग ! त्वयिमुग्धभावा द्विज्ञप्रभो विज्ञपयामि किंचित् ।२।
किं बाललीलाकलितो न बाल, पित्रो पुरो जल्पति निर्विकल्प
तथा यथार्थ कथयामि नाथ !, निजाशय सानुशयस्तवाग्र ।३।
दत्त न दान परिशीलित च, न शालि शील न तपोऽभितप्तम् ।
शुभो न भावोऽप्यभवदभवेऽस्मिन्,विभो मया भ्रान्तमहोमुधैव ।४।
दग्धोऽग्निना क्रोधमयेन दष्टो, दुष्टेन लोभाख्यमहोरगेण ।
ग्रस्तोऽभिमानाजगरेण माया जालेन बद्धोऽस्मि कथ भजे त्वां ।५।
कृत मयाऽमुत्र हित न चेह, लोकेऽपि लोकेश ! सुख नमेऽभूत् ।
अस्मादशा केवलमेवजन्म, जिनेश ! जज्ञे भवपूरणाय ।६।
मन्ये मनो यन्नमनोज्ञवृत्त !, त्वदास्यपीयूषमयूखलाभात ।
द्रुत महानदरस कठोर मस्मादृशां देव तदश्मतोऽपि ।७।
त्वत्त सुदुष्प्राप्यमिद मयाऽऽप्त, रत्नत्रय भूरिभवभ्रमेण।
प्रमादनिद्रावशतो गत तत, कस्याग्रतो नायक ! पुत्करोमि ।८।
वराग्यरग परवञ्चनाय, धर्मोपदेशो जनरञ्जनाय ।
वादाय विद्याध्ययन च मे भूत, कियद्ब्रुवे हास्यकर स्वमीश ! ९
परापवादेनमुख सदोष, नेत्र परस्त्रीजनवीक्षणेन ।
चेत परापायविचिन्तनेन, कृत भविष्यामि कथ विभोऽह ।१०।
विडंबित यत्स्मरघस्मरार्त्ति-दशावशात्स्व विषयान्धलेन ।
प्रकाशित तद्भवतो ह्रियव, सर्वज्ञ ! सर्वं स्वयमेव वेत्सि ।११।
ध्वस्तोऽन्यमन्त्र परमेष्ठिमन्त्र, कुशास्त्रवाक्यैर्निहतागमोक्ति ।
कर्त्तु वृथाकर्मकुदेवसगा-दवाछि हि नाथ ! मतिभ्रमो मे ।१२।

विमुच्य दृग्लक्ष्यगत भवन, ध्याता मया मूढधिया हृदन्त ।
कटाक्षवक्षोजगभीरनाभि-कटीतटीया सुदृशांविलासा ।१३।
लोलेक्षणावक्त्रनिरीक्षणेन, यो मानसे रागलवो विलग्न ।
न शुद्धसिद्धांतपयोधिमध्ये, धौतोप्यगात्तारक कारण किं ।१४।
अंग न चगं न गणो गुणानां, न निर्मल कोऽपि कलाविलास ।
स्फुरत्प्रधानप्रभुता च कापि, तथाप्यहंकारकदर्थितोऽहं ।१५।
आयुर्गलत्याशु न पापवुद्धि-र्गत वयो नो विषयाभिलाष ।
यत्नश्च भैषज्यविधौ न धर्मे, स्वामिन्महामोहविडंबना मे ।१६।
नात्मा न पुण्य न भवो न पाप, मया विटानां कटुगीरपीय ।
अधारि कर्णे त्वयि केवलार्के, परिस्फुटे सत्यपि देव ! धिग्माम ।१७।
न देवपूजा न च पात्रपूजा, न श्राद्धधर्मश्च न साधुधर्म ।
लब्ध्वापि मानुष्यमिद समस्त, कृत मयाऽरण्यविलापतुल्य ।१८।
चक्रे मया सत्स्वपि कामधेनु-कल्पद्रुचितामणिषु स्पृहार्त्ति ।
न जैनधर्मे स्फुटशर्मदेऽपि, जिनेश ! मे पश्य विमूढभाव ।१९।
सद्भोगलीला न च रोगकीला, धनागमो नो निधनागमश्च ।
दारा न कारा नरकस्य चित्ते, व्यचिन्ति नित्य मयकाऽधमेन ।२०।
स्थित न साधोर्हृदि साधुवृत्तात्, परोपकारान्न यशोऽर्जित च ।
कृत न तीर्थोद्धरणादिकृत्य, मया मुधाहारितमेव जन्म ।२१।
वैराग्यरगो न गुरूदितेषु, न दुर्जनानां वचनेषु शान्ति ।
नाध्यात्मलेशो मम कोऽपि देव, तार्य कथकारमय भवाब्धि ।२२।
पूर्वं भवेऽकारि मया न पुण्य-मागामिजन्मन्यपि नो करिष्ये ।
यदीदृशोऽहं मम तेन नष्टा, भूतोद्भवद्भाविभवत्रयीश ! ।२३।

किंवा सुधाऽहवहुधर सुधाभुव, पूज्य त्वदग्रे चिरत स्वकीय ।
जल्पामि यस्मात त्रिजगत्स्वरूप, निरूपकस्त्वक्रियदेतदत्र ।२४।
दीनोद्धारधुर धरस्त्वदपरो, नार्ते मदर्य कृपा ।
पात्र नान्र जने जिनेश्वर ! तथाऽप्येता न याचे श्रिय ।
कि त्वहन्निदमेव केवलमहो, सदबोधिरत्न शिव ।
श्रीरत्नाकरमगलकनिलय ! श्रेयस्कर प्रार्थये ।२५।

॥इति॥

ज्ञानचन्द्र गच्छीय गणिवर श्री रत्नचन्द्रजी म

गुणाष्टकम्

(रचयिता–पूज्य श्री घासीलालजी महाराज)

वनाना यथा नन्दन कल्पवृक्ष–
स्तरूणा मणीना च चिन्तामणिश्च ।
तथा नानचन्द्रीय गच्छे हि, यस्त,
भजध्व गणीन्द्र मुनि रत्नचन्द्रम ।१।

जसे वनो मे श्रेष्ठ नन्दन, कल्पतरु तरु मे यथा,
मणियो मे चिन्तामणि गिनाता श्रेष्ठ है जग मे यथा ।
श्री नानचन्द्र गणीश गण मे वर हुए समता लिये,
गणिराज उन श्री रत्नचन्द्र मुनीन्द्र को धरिये हिये ।१।

विहार परस्योपकाराय यस्य,
सुधाऽऽसाररूपा च वाणी यदीया ।

सुहर्म्ये व्रते भावनास्तम्भ युक्ते,
यतेधर्मवातायने ज्ञानदीपे ।
विराजन् हरन् भव्यताप च यस्त,
भजध्व गणीन्द्र मुनि रत्नचन्द्रम् ।५।

सद भावना स्तम्भ सगे व्रतहर्म्य राजित था सदा,
यतिधर्म खिड़की मान रूपी, दीप जिसमे सर्वदा ।
उस हर्म्य मे रहते सदा सताप हरने के लिये,
गणिराज उन श्री रत्नचन्द्र मुनीन्द्र को धरिये हिये ।५।

सुधीरस्य यस्याऽलसन् धर्ममार्गे,
मन कायवाग्वृत्तयस्त मुनीन्द्र ।
गुणानां च सिन्धु हि षटकाय बन्धु,
भजध्व गणीन्द्र मुनि रत्नचन्द्रम् ।६।

मन, वचन और शरीर की सब वृत्ति जिनकी लग्न थी,
शुभ मार्ग मे निश्चल सदा क्षणमात्र भी न विलग्न थी ।
गुणसिन्धु जो षटकाय बन्धु विराजते थे व्रत लिये,
गणिराज उन श्रीरत्नचन्द्र मुनीन्द्र को धरिये हिय ।६।

सदा सयताचार दत्तावधानो,
विशुद्ध प्रसिद्ध समिद्ध प्रबुद्ध ।
शुभध्यान विज्ञान युक्तश्च यस्त,
भजध्व गणीन्द्र मुनि रत्नचन्द्रम् ।७।

जो सवदा मुनि के नियम में मारधार महान थे,
अति शुद्ध और प्रसिद्ध और प्रसद्ध वृद्ध प्रधान थे।
शुभ ध्यान और विज्ञान स यत वा तपस्या थे किये,
गणिराज उन श्री रत्नचन्द्र मुनीन्द्र को धरिय हिये ।७।

अनन्दसमद सदा भव्यलोका,
शरच्चन्द्र तुल्य मुख मस्य दृष्ट्वा ।
अतस्त मुनीश शमद च मत्वा,
भजध्व गणान्द्रं मुनि रत्नचन्द्रम् ।८।

जिनके शरद ऋतु चन्द्रवत् मुख लख भविजन थे सदा
अति हर्ष पाते कुमुद वन क्य उन से सदा ।
इसस भविक जन ! जो मुनीन्द्र हृदय में ये लिये,
गणिराज उन श्री रत्नचन्द्र को धरिय हिय ।८।

इद पवित्र सशुद्ध, रत्नाष्टक शुभ ।
निर्मित घासिलालेन, पठन् सोऽश्नुते शुभम् ।९। ९।

रत्नचन्द्र गणि अष्टक, पढ़े सुने मन लाय,
कहते घासीलाल वह, परम शुभ गाय ।९।

॥ शुभ भूयात् ॥ इति ॥

ति ॥
बोधम ।

बहुश्रुत श्री समर्थ मुनि

गुणाष्टक

(रचयिता-प० श्री धवरचन्द्रजी बाँठिया 'वीरपुत्र')

ऐदंयुगीनमुनिषु ह्यखिलेषु सत्सु,
प्राप्त बहुश्रुतपद विमल तु येन ।
ज्ञानादि रत्न चय चञ्चित चेतस त ।
प्राज्ञ समथगुरुराजमह नमामि ।१।

एदयुगीन प्रवीण मुनिजन मण्डली में जो महा ।
पाए परम विश्रुत बहुश्रुत पद इतरजन दपहा ।।
ज्ञानादि रत्न समूह भूषित चित्त अति मनिमान को ।
प्रणमामि नित्य समथ श्री गुरुराज प्राज्ञ महान का ।१।

नो दृश्यते तवसमो मुनिमण्डलेऽस्मिन् ।
गूढार्थ विज्जिनगिरा परमागमज्ञ ।।
उत्कृष्टसयमधरो गुणसागरश्च ।
प्राज्ञ समथगुरुराजमह नमामि ।२।

जिन कथित वचन गूढार्थवित आगम परम ममन को ।
मुनि मण्डली म आप जसे दीखता नहि सुज्ञ को ।।
उत्कृष्ट सयमधर तथा गुण रत्नराशि निधान को ।
प्रणमामि मल्ल समथ श्री गुरुराज प्राज्ञ महान का ।२।

आराधना विदधतोत्कट भाव भक्त्या ।
बद्ध त्वया खलु शुभ जिन नामकर्म ।।

मन्ये त्वहं जिनगिरामवलम्ब्य सुज्ञ ।
प्राज्ञं समर्थगुरुराजमहं नमामि ।३।

अतिप्रेम भक्ति प्रभाव से करते हुए आराधना ।
शुभ भावना भावित किया जिन नामकर्मोपाजना ।।
जिनवर वचन अवलम्ब कर मैं मानता श्रीमान को ।
प्रणमामि सुज्ञ समर्थ श्रीगुरुराज पण्डित महान को ।३।

आगत्य तत्र भवतां चरणारविन्दे ।
नव्या पुरातनजना विबुधा परेच ।।
पृष्ट्वा समाहितधियो नितरां भवन्ति ।
प्राज्ञं समर्थगुरुराजमहं नमामि ।४।

श्रीमान के पदपद्म में आकर परम विद्वान ने ।
अपने मनोगत प्रश्न को कतिपय नवीन पुरान ने ।।
होते समाहित चित्त निश्चित पूछकर श्रीमान को ।
प्रणमामि सुज्ञ समर्थ श्री गुरुराज प्राज्ञ महान को ।४।

प्रश्नोत्तरं वितरतां भवतामपूर्वाम् ।
शैलीं विलोक्य विबुधाश्चकिता भवन्ति ।।
तुष्टा स्तुवन्ति भवतोऽमित शास्त्रबोधम् ।
प्राज्ञं समर्थगुरुराजमहं नमामि ।५।

प्रश्नोत्तरी करते समय शैली सुगम अवलोक कर ।
होते चकित विद्वान भी गम्भीर मति अति विज्ञ वर ।।
सन्तुष्ट हो करते प्रशंसा शास्त्र विषयक ज्ञान की ।
प्रणमामि विज्ञ समर्थ श्री गुरुराज सुमति निधान की ।५।

दृष्ट्वा भवन्तमृजुकं मदमानिवर्गं ।
सद्य स्वयं भवति सत्यभिमानहीन ॥
श्रीमन्तमेव शरणी कुरुते विनीत ।
प्राज्ञ समर्थगुरुराजमहं नमामि ।६।

अतिशय सरल मति आपको अभिमानी जन भी देखकर।
तजता तुरत अभिमान तव पद कमल मे सिर टेक कर॥
अति नम्र विनयी बन शरण स्वीकारता श्रीमान का।
प्रणमामि विज्ञ समर्थ श्री गुरुदेव प्राज्ञ महान का ।६।

उग्रं विहारमनिशं विधिवद् विधाय ।
धर्मोपदेशमनिशं विधिवत्प्रदाय ॥
भव्यान् करोति जिनमार्गरतान् सदैव ।
प्राज्ञ समर्थगुरुराजमहं नमामि ।७।

मुनिवर परम उत्कृष्ट निरन्तर सविधि सुगम विहार कर।
विधिवत् सकल कल्याणमय धर्मोपदेश प्रचार कर॥
करते सदा जिनमार्ग रत अति भव्यजन सुजान को।
प्रणमामि सुज्ञ समर्थ श्री गुरुदेव प्राज्ञ महान को ।७।

सशुद्धदर्शनधरं परमार्थ विज्ञम् ।
शीलाढ्यमात्मदमिनं गुणिनं गुणज्ञम् ॥
शान्तं प्रसन्नवदनं करुणावतारम् ।
प्राज्ञ समर्थगुरुराजमहं नमामि ।८।

सद्बुद्ध दर्शनवान अरु परमार्थ विद्यावान को।
गुण ज्ञान अति गुणवान संयम शील रत्न निधान को॥
अतिशय प्रसन्न प्रशान्त आनन परम करुणावान को।
प्रणमामि नित समय श्री गुरुदेव पूज्य महान को।८।

भक्तघेवरचन्द्रेण, भृगेण ते पदाब्जयो।
रचितं वीरपुत्रेण, श्रीसमयगुणाष्टकम्॥
बिन्दुमात्रमिदं सिन्धोर्भवदीय गुणाष्टकम्।
यः पठेच्छ्रणुयाद् वापि शिवं स लभते ध्रुवम्।९।

भक्त 'घेवरचन्द्र' मधुकर पदकमल तल्लीन हो।
रचित 'समय गुणाष्टक' अति भक्ति भाव प्रवीन हो।
यह तव गुणाष्टक एक केवल बिन्दु सिन्धु समान को।
पढ़ते तथा सुनते हुए पावे परम कल्याण को।६।

– इति –

२

पीयूष वर्षि नयन द्वयमास्य पद्मं।
वाचं विमुञ्चति मधुप्रमिताञ्च यस्य॥
तं ज्ञानचन्द्रगणि गच्छ सरोजसूर्यं।
पूज्यं समयमुनिराजं महं नमामि।१।

सतत अमृत झरना झरत जिनके सुलोचन युग्म से।
जिनके मधुर मधुमय मृदुल वाणी स्रवत मुखपद्म से

जिन ज्ञानचन्द्र गणीन्द्र पंकज रवि सुतुल्य ज्योतिमान को ।
नमता हूं बारबार पूज्य समयमुनि महान् को ।।१।

ज्ञानं यदीयममलेन्दु विकाशिशुद्धे ।
चित्ते विहायसि विभात्युदितं सदैव ।।
विध्वस्तमोहपटल प्रबलान्धकारं ।
पूज्य समयमुनिराजमहं नमामि ।२।

सतत उदित विज्ञान जिनका शुद्ध हृदयाकाश मे ।
मोह अंधकार विनाशकर जिमि चन्द्र है आकाश मे ।
अभिराम चरित ललाम मति विनान ज्ञान निधान को ।
नमता हूं बारबार पूज्य समयमुनि महान् को ।२।

यस्य प्रसादमधिगत्य समस्त ताप-
पाप प्रतापमभिहृत्य जनो विभाति ।।
नित्य वितत्य सुखमत्यधिकं तमार्यं ।
पूज्य समयमुनिराज महं नमामि ।३।

जिनकी कृपा से हरन्त नर सब ताप पाप गुमान को ।
सबन हो जन बनत धन भाजन परम कल्याण को ।।
निर्मल चरित तार्किकमति उत्पादबुद्धि निधान को ।
नमता हूं बारबार पूज्य समयमुनि महान् को ।३।

शान्त नितान्तमतिकान्त मुखं त्वदीयं ।
मालोक्य लोक इहलोकशुचं जहाति ।।

प्राप्नोति लोकपरलोकसुख समर्थं ।
पूज्य समयमुनिराजमहं नमामि ।४।
तव शान्त मुख अवलोक कर सब लोक छोड़त शोक को।
पावत परम कल्याण मय सुख लोक अरु परलोक को ॥
यदावन्त अति मतिमन्त सन्त गीतार्थ गुण गणवान् को ।
नमता हूं बारबार पूज्य समय मुनि महान् को ।४।
पर्यायतो रविरिहैत्य तमो निहन्ति ।
चन्द्रो ऽपि किन्तु समये न च सर्वदा तु ॥
त्वं सर्वदा तु जनताजडता निहन्ति ।
मन्ये त्वमत्र भुवने ऽसि नवीन भानुः ।५।
रविचन्द्र हरते निज समय बहिरन्धकार वितान को ।
पर आपतो हरते निरन्तर जन हृदय अज्ञान को ।'
अभिनव दिवाकर ही अतः मैं मानता श्रीमान् को ।
नमता हूं बारबार पूज्य समयमुनि महान् को ।५।
यत्ते पवित्रमति चित्र चरित्रमत्र ।
वित्रासयत्यखिलदोषदलं सदैव ॥
शक्तो न वक्तुमिह को ऽपि जनो गुणान् ते ।
पूज्य समयमुनिराजमहं नमामि ।६।
तेरा पवित्र चरित्र अतिशय चित्र जो इस लोक में ।
भयभीत कर झट डाल देता दोष दल को शोक में ॥
वर्णन सके कवि कौन जग में बहुश्रुत गुण निधान को ।
नमता हूं बारबार पूज्य समयमुनि महान् को ,

निर्मोहमानजितसग निरस्त दोप ।
मध्यात्मतत्त्वनिरत नितरा सदव ।।
कन्दर्पदर्पदलने ऽतितरा समर्थं ।
पूज्य समर्थमुनिराजमह नमामि ।७।

निर्मोहमान समस्त दोषा से रहित जित सग को ।
अध्यात्म विद्या ध्यान रत मद भग करत अनग को ।।
अति शूर वीर गभीर मुनिवर धार अति गुणखान का ।
नमता हू वारवार पूज्य समथ मुनि महान् का ।७।

युक्ति प्रयुक्तिरसयुक्त सुबोध रीति–
माधाय धर्म विधिबोधविधौ समर्थ ।।
एक स्त्वमेव भुवने त्वमिवासि नून ।
भव तमानमति 'घेवरचोरपुत्र' ।८।

करते सरल रसमय सुयुक्तिक धम के उपदश को ।
मुनि आप जसे आप ही समरथ' मिले इस देश को ।।
ममज्ञ आगमविज्ञ मुन ज्ञानगच्छ सिरताज को ।
नित नमत घेवर वारपुत्र' श्री समथ गुरुराज का ।८।

— द्वितीय गुणाष्टक समाप्त —

३

चिन्तामणियत्तुलना न धत्ते ।
यन्मूल्यकं पाश्वमणिर्न दत्ते ॥
एतादृश जगम रत्नमेकम ।
समथमल्लो मुनिरद्वितीय ।१।

विख्यात चिन्तामणि हुआ जिनके नहीं समतोल मे ।
इस तरह पारसमणि कभी आता न जिनके मोल मे ॥
ईदृश विलक्षण एक जगम रत्न अति गुणवान है ।
गुरुदेव मल्ल समथ मुनिवर अद्वितीय महान है ।१।

ज्ञानेन शीलेन गुणेन वाचा ।
ध्यानेन मौनेन च सयमेन ॥
शौर्येण वीर्येण पराक्रमेण ।
समथमल्लो मुनिरद्वितीय ।२।

विज्ञानशील समेत वाणी युत विमल गुण से तथा ।
सद्ध्यान मौन समेत अतिशय आत्म सयम स तथा ।।
अति शौय वीय पराक्रमादि समेत अति बलवान है ।
गुरुदेव मल्ल समथ मुनिवर अद्वितीय महान हैं ।२।

श्रीज्ञानचन्द्रीय विशाल गच्छे ।
महत्सु सत्स्वन्य मुनीश्वरेषु ॥

निर्मोहमानजितमा निरस्त दोष ।
मध्यात्मतत्वनिरत नितरा सदैव ॥
व दपदपदला ऽ तितरा समर्थ ।
पूज्य समर्थमुनिराजमह नमामि ।७।

निर्मोहमान समस्त दोषो स रहित जित सग को ।
अध्यात्म विदधा ध्यान रत मद भग वरत अनग को ॥
अति शूर वीर गभीर मुनिवर धार अति गुणगान को ।
नमता हू वारवार पूज्य समय मुनि भगवान को ।७।

युक्ति प्रयुक्तिरसयुक्त सुबोध रीति-
माधाय धम विधिबोधविधौ समर्थ ॥
एक स्त्वमेव भुवने त्वमिवासि नून ।
भवन्तमानमति 'वेवरधीरपुत्र' ।८।

करत सरल रसमय सुयुक्तिक धम के उपदेश को ।
मुनि आप जग आप हो 'समरथ मिले इस देश को ॥
ममन आगमविद मुन मानगच्छ सिरताज को ।
नित नमत धवर वीरपुत्र श्री समय गुरुराज को ।८।

— द्वितीय गुणाष्टक समाप्त —

३

चिन्तामणिर्यत्तुलना न धत्ते।
यन्मूल्यकं पारसमणिर्न दत्ते॥
एतादृशं जंगम रत्नमेकम्।
समर्थमल्लो मुनिरद्वितीयः॥१॥

विख्यात चिन्तामणि हुआ जिनके नहीं समतान में।
इस तरह पारसमणि कभी आता न जिनके मान में॥
इनसा विलक्षण एक जंगम रत्न अति गुणवान है।
गुरुदेव मल्ल समर्थ मुनिवर अद्वितीय महान है॥१॥

ज्ञानेन शीलेन गुणेन वाचा।
ध्यानेन मौनेन च संयमेन॥
शौर्येण वीर्येण पराक्रमेण।
समर्थमल्लो मुनिरद्वितीयः॥२॥

विज्ञानशील समेत वाणी युत विमल गुण है तथा।
सद्ध्यान मौन समेत अतिशय आत्मसंयम है तथा॥
अति शौर्य वीर्य पराक्रमादि समेत गुणिजनमान हैं।
गुरुदेव मल्ल समर्थ मुनिवर अद्वितीय महान हैं॥२॥

श्रीज्ञानचन्द्रीय विशालगच्छे।
महत्सु सत्स्वन्य मुनीश्वरेषु॥

सम्प्राप्तवान् "पण्डितराट्" पद त्व ।
समर्थमल्लोमुनि रद्वितीय ।३।

श्री ज्ञानचन्द्र मुनीन्द्रजी के विमल गच्छ विशाल में ।
रहते हुए मुनिवृन्द में जिनके लिखा था भाल में ।
उस परम 'पण्डितराज' पद को प्राप्त कर श्रीमान हैं ।
गुरुदेव विन समर्थ मुनिवर अद्वितीय महान् हैं ।३।

शान्तश्च दान्तश्च बहुश्रुतश्च ।
शास्त्रस्य गूढार्थ रहस्य वेदी ॥
अनानहन्ता परमोपदेष्टा ।
समर्थमल्लो मुनिरद्वितीय ।४।

अति शान्त दान्त नितान्त अरु बहुश्रुत सकल सिद्धान्त है ।
शास्त्रीय गूढ पदार्थ बोधामान्य निर्मल स्वान्त है ॥
जनहित निर्मल उपदेश कर हरते परम अज्ञान है ।
गुरुदेव विन समर्थ मुनिवर अद्वितीय महान् हैं ।४।

आत्माय भूमौ सतत ददाति ।
धर्मोपदेश परमार्थवृत्त्या ॥
करोति भव्यान जिनधम रक्तान् ।
समर्थमल्लो मुनिरद्वितीय ।५।

परमार्थवृत्या निपुणमति इस आर्य भू में घूमकर
देते निरन्तर धर्म का उपदेश जिनमत चूमकर ॥

जिनधर्म में रत भव्यजन को कर रहे श्रीमान् हैं।
गुरुदेव विज्ञ समर्थ मुनिवर अद्वितीय महान् हैं।५।

द्रव्यान्धकार हरतोऽब्जसूर्यौ।
भावान्धकार हरसेत्वमेक ॥
अखण्डधामाऽसि सदा प्रकाश ।
समर्थमल्लो मुनिरद्वितीय ।६।

द्रव्यान्धकार विनाश करते गगनमणि अरु चन्द्र हैं।
भावान्धकार विनाश करते आप सुन अतन्द्र हैं॥
अतिशय अखण्ड प्रकाशमय विज्ञान धाम भवान हैं।
गुरुदेव सुज्ञ समर्थमुनिवर अद्वितीय महान् हैं।६।

सौम्य मनोज्ञ परम सुशान्तम्।
भव्य विशाल च मुखारविन्दम॥
दृष्ट्वात्वदीय तु भवति भव्य।
समर्थमल्लो मुनिरद्वितीय ।७।

अति सौम्य मंजुल कान्ति शान्ति समेत तव मुख कंज को।
अति दिव्य भव्य विशालता युत परम सुषमा पुंज को॥
अवलोक कर सब शोक तज सब आह्लादवान हैं।
गुरुदेव विज्ञ समर्थ मुनिवर अद्वितीय महान् हैं।७।

अलौकिकोऽनुत्तर आत्मज्ञ।
विनीतको विज्ञतमो विदग्ध॥

त्यागी विरागी च गुणी गुणज्ञ
समर्थमल्लो मुनिरद्वितीय ।८।

अतिशय अलौकिक अरु अनुत्तर आशु प्रभावान है।
विनयी परम अति विज्ञतम समुद्र मति श्रीमान् हैं॥
त्यागी विरागी और गुणज्ञानी तथा गुणवान हैं।
गुरुदेव श्री समर्थ मुनिवर अद्वितीय महान् हैं।८।

कृत घेवरचन्द्रेण, श्री समर्थगुणाष्टकम्।
भक्त्या नित्य पठेत यस्तु, शीघ्र सलभते शिवम्।६।

भक्त घेवरचन्द्र कृत अष्टक समर्थ मुनीश के।
भक्ति से जो पढत नित निश्चय परम पद सो लहे।६।

॥ तृतीय गुणाष्टक समाप्त ॥

॥ सूत्रकार-स्तुति ॥

गौतम सुधर्म स्वामिन ! उपकार यह तुम्हारे ।
हम से अदा न होगा , हो रहनुमा हमारे ॥टेर॥
जननी विमल त्रिभंगी, फली है द्वादशांगी ।
स्यादवाद मय प्रमाणी, सापेक्ष वचन वारे ॥१॥
षट द्रव्य नौ पदारथ, जड जीव आदि निर्णय ।
पूछे हैं द्रव्य लक्षण, पर्याय न्यारे न्यारे ॥२॥
तप चरण ज्ञान दर्शन, शिव मग विशद पूछे ।
करके उसी को धारण, फिरते हैं हम विचारे ॥३॥
आगम सुधाब्धि में के, कुछ बूंद ला रहे हैं ।
उसका आधार हमको, इस वक्त विश्व सारे ॥४॥
हमको उचित है सुन कर, फरमान शान धारें ।
सुमति 'अमी' को दीजे, अपना हम सुधारें ॥५॥

प

संघ के प्रकाशन

		मूल्य	पोस्टेज
१	मोक्षमार्ग ग्रंथ	५-००	१-६६
२	उत्तराध्ययन सूत्र	३-००	०-४४
३	उववाइय सूत्र	३-००	०-४८
४	अनुग[illegible]ा सूत्र	१-००	०-२५
५	नन्दी सूत्र	१-००	०-२०
६	दशवैकालिक सूत्र	१-२५	०-३४
७	आत्मसाधना संग्रह (श्री मोतीलालजी मांडोत का)	१-२८	०-३५
८	स्त्रीप्रधान धर्म	०-२५	०-८
९	सुखविपाक सूत्र	०-२०	०-८
१०	प्रतिक्रमण सूत्र	०-१७	०-८
११	सामायिक सूत्र	०-०६	०-५
१२	सूयगडांग सूत्र अप्राप्य	१-[illegible]०	०-०

—. सम्यग्दर्शन .—

श्री अखिल भारतीय साधुमार्गी जैन संस्कृति रक्षक संघ के मुख पत्र "सम्यग्दर्शन" के ग्राहक बनें। निग्रंथ संस्कृति के प्रचारक, जैनत्व ज्ञान के प्रकाशक और विकृति के अवरोधक इस पत्र को अवश्य पढ़ें। आपके सम्यग्ज्ञान में वृद्धि होगी, आप संस्कृति और विकार का भेद जान सकेंगे। वार्षिक मूल्य केवल ६)।